प्रकाशक :
सूर्य प्रकाशन मन्दिर
बीकानेर

मुद्रक :
पवन आर्ट प्रेस, बीकानेर

मूल्य : आठ रुपये मा

शब्दों का विष

दादी

"यहाँ पानी की बाल्टी क्यों रखी ?"

अचानक क्रोध-पूर्ण स्वर में दादी चिल्लाई और देखते ही देखते बेरहम बनकर उसने वह पानी से भरी बाल्टी लाने वाले पर उड़ेल दी।

बेचारा बुड्ढा !

कार्तिक की शीत-भरी साँझ उस पर हवा की हल्की-हल्की लहरें। एक दफा सिर से पाँव तक वह थर-थर काँप गया। क्षण भर के लिये ऊपर की साँस ऊपर और नीचे की नीचे रह गई। बेचारे की घिग्घी बंध गई।

साँस की रुकावट के बीच बोला—"हे राम !"

लेकिन दादी ने इधर ध्यान ही नहीं दिया। वह तो निष्ठुर स्वर

में चीखकर कहने लगी—"मैंने तुम से कितनी बार कहा है कि जब मैं मन्दिर से लौट कर आऊं तो बीच में बाल्टी मत रखा करो, पर मेरी सुने कौन—माने कौन !"

'यह बात नहीं है—।'—सहमे कण्ठ से घबरायी सी मरी दयनीय मुद्रा बनाते हुये उसने रुक-रुक कर कहना चाहा — 'आगे गौर करूंगा हो, किन्तु...।"

दादी ने वाक्य पूरा नहीं होने दिया। मध्य में तीखी बनकर झिड़क उठी—"अभी-अभी दफ्तर से लौटकर आये हो। शायद स्नान भी नहीं किया होगा ..?

"नहीं तो।"

इस संदेह के जवाब में बुद्धू ने गर्दन हिलादी।

"लो, मेरी ओढ़नी का पल्ला इस बाल्टी से छू गया। ठाकुरजी का चरणामृत और प्रसाद दोनों ही अपवित्र हो गए। अब ये किस काम के। मुझे दूसरी बार स्नान करना पड़ेगा ..।"

"इस...वक्त...स्नान ..करना...पड़ेगा...?"

बुद्धू घन्ना जैसे इस अपराध के बोझ के नीचे दब सा गया, जहां से मुक्ति मिलनी असम्भव है।

"क्या कहा ?"—आंखें निकालकर इस बार फिर दादी चिल्लाई—"इतनी बार तुम्हें समझा दिया, फिर भी तुम्हारी खोपड़ी में कुछ नहीं घुसता।"

इस डांट-फटकार से घन्ना एक तरह से डर गया। आगे कुछ कहने की हिम्मत भी नहीं रही। सिर झुकाये चुपचाप सुनता रहा।

"आइन्दा ध्यान रखना।"

अन्तिम चेतावनी देकर दादी घर के अन्दर प्रवेश कर गई। उसका बड़बड़ाना अभी तक खत्म नहीं हुआ था। असल में यह अपेना द्वार पर ही हो गया था, जहां भूल से बाल्टी रख दी गई थी।

जाती हुई दादी की पीठ को निहार कर घन्ना ने कांपते हाथ

में खाली बाल्टी उठाई और बाहर गली के सार्वजनिक नल से पानी भरने के लिये चल दिया। यूं भी उसके पैर भारी-भारी से हो रहे हैं। एक ठण्डी सिहरन तमाम बदन में प्रविष्ट करके दौड़ने लगी है, जिसके कारण उसकी हालत धीरे-धीरे खराब होती जा रही है।

बेचारा दीन और लाचार बुड्ढा !

पीछे से दरवाजे की चौखट पर सहसा दादी का सिर दीखा और वह ऊँचे स्वर में बोली—"जरा जल्दी करना। हरबार गलती हो गई कहकर तुम तो छुट्टी पा लेते हो, लेकिन इधर मेरी पूजा चौपट हो जाती है...।"

घन्ना ने कुछ सुना या नहीं, ठीक-ठीक कहना मुश्किल है। इस पर भी वह सोच रहा है कि पहले वह स्नान करेगा। इसके बाद पत्नी सारे कपड़े धोकर नहाने बैठेगी। आंगन भी पानी से साफ करना पड़ेगा तब कहीं मनोवांछित शुचिता लौटेगी। छुआछूत की यह बीमारी काफी पुरानी है। न जाने कब दूर होगी।

दादी !

करीब करीब सारे मोहल्ले की दादी है वह। सभी उसे आदर सूचक सम्बोधन से पुकारते हैं। सुनकर वह प्रसन्न होती है। एक बड़प्पन का अज्ञात भाव उसकी आंखों में अनचाहे ही भर जाता है। बहुत कम लोग हैं, जो उसे घन्ना की बहू कहते हैं। यह नाम तमाम लोगों के मुंह पर चढ़ गया है। इस कारण कोई उलझन या परेशानी नहीं होती !

प्राय. स्त्रियों की आयु के सम्बन्ध में बात करना अनुचित ही नहीं, वरन् साधारण लोकाचार के विरुद्ध भी है। वैसे प्रसंग वश

भी-कभी मुंह से अगर यह अप्रिय सत्य प्रकट हो जाय, तो उसे वदम आपत्ति-जनक नहीं कह सकते ।

दादी की आयु कितनी है—निर्धारित तिथि किसी को भी ज्ञात नहीं । इस पर उनकी शारीरिक आकृति देखकर भी अनुमान लगाना कठिन है । उनका रहन-सहन, खान-पान और कपड़े-लत्ते तक प्रायः भ्रम-जाल में फंसा लेते हैं । यू गली-मोहल्ले की सब बड़ी-बुढ़ियें बड़े ही विश्वास के साथ कहती हैं कि कल की तो बात है, जब धन्ना उसे ब्याह कर लाया था । कोई लम्बा समय नहीं बीता । लेकिन इन थोड़े से ही वर्षों में वह कितनी बदल गई है । असमय में ही वृद्धावस्था ने उसे पूरी तरह घेर लिया । गालों में सल पड़ चुके हैं । पोपला मुंह और सन के समान सफेद केश उसे दादी तो क्या, पर दादी बनाने के लिये उद्यत हैं । आंखें गड्ढे में धस गई हैं और दृष्टि धुंधली पड़ चुकी है । सूखे-सूखे हाथ पैरों को देखकर उसकी दुर्बल काया का सहज ही अन्दाजा लगा सकते हैं ।

आज प्रातः काल से ही दादी के सर में दर्द उठना शुरु हो । यह कोई आकस्मिक यन्त्रणा नहीं है, बल्कि पुराना रोग है । अशान्ति एवं बेचैनी कभी-कभी इतनी बढ़ जाती है कि एक पल का चैन भी नसीब नहीं होता ।

सर पर पट्टी बांधे दादी माची पर लेटी हुई है और आर्त स्व मे धीरे-धीरे कराह रही है। उसकी कराह में विचित्र सी वेदना है अन्त विदारी पीड़ा है ।

"हे राम ! हे ठाकुरजी, मेरी पीड़ा हरो । हे सत्यनारायण, मे भव-बाधा हरो । हे राम⋯।"

"लो, चाय पीलो ।"

तभी धन्ना प्याली में कड़क चाय बनाकर ले आया । उस यह दूसरी दफा चाय बनाई है । दादी कोई गोली निगल कर जल्दी-जल्दी गटकने लगी—गर्म-गर्म और वा⋯ चाय । मगर दा

के न तो होंठ ही जले और न जीभ। वह सारी की सारी सुड़क गई थोड़ी ही देर में।

स्पष्ट है कि धन्ना आज सुबह से ही व्यस्त है। पत्नी के अप्रत्याशित रूप से बीमार हो जाने के कारण बहुधा घर का सारा काम मजबूरन उसे ही करना पड़ता है। सफाई करने से लेकर बर्तन मांजने और रसोई बनाने तक का काम हाथ में लेना पड़ता है। यह एक ऐसी विडम्बना है जिसे आज तक वह आज्ञाकारी और स्वामी-भक्त सेवक की तरह सिर झुका कर झेलता आया है। जब कभी अधिक तंग हो जाता है तो अपनी अन्तरखीझ को बड़ी कठिनाई से भीतर ही भीतर रोक पाता है। वैसे अचानक विवशता-जनित खेद से उसका हृदय आक्रान्त हो जाता है तो निराशा-पूर्ण ढंग से वह अपने खोटे नसीब को कोस लेता है—बस !

वास्तव में पत्नी सेवा का ऐसा उदाहरण अन्यत्र मिलना दुर्लभ है !

ताज्जुब तब होता है, जब इस बारे में गली-मोहल्ले वाली औरतें भिन्न-भिन्न रायें व्यक्त करती हैं। संदेह नहीं कि उनकी अलग-अलग मान्यतायें हैं-धारणायें हैं। दादी चाहे कितनी हो चीखे-चिल्लायें, मगर वे बदलती नहीं '

"यह दादी सर-दर्द का झूठा बहाना बनाके पड़ी रहती है। हकीकत में कुछ नहीं।"

"बेचारे दादे की मुसीबत है।"

कभी-कभी मजाक में धन्ना को भी औरतें 'दादा' या 'दादे' कहकर पुकारती हैं, लेकिन सभी नहीं।

"गऊ-सा सीधा आदमी है, इसलिये कठपुतली की तरह नचाती रहती है।"

"बस, रसोई का काम खत्म करके यह दफ्तर की तरफ रवाना हुआ नहीं कि दादी का सर-दर्द एक चमत्कारिक ढंग से गायब।"

खूब चटखारे लेकर बातें करेगी और···।

विद्रूप से भरी हंसी की बौछार बीच-बीच में सभी के मुंह से
ट पड़ती है, इससे बातें करने का आनन्द आ जाता है।

'और तो और दीपावली के अवसर पर वह सारे घर व
पाई-पुताई भी इस 'काठ के उल्लू' से कराती है। खुद आलस
ह लटकाये टुकुर-टुकुर देखती है।"

इस बार 'काठ के उल्लू' पर काफी लम्बा ठहाका लगा और
स-पास की औरतें भी रस लेकर बातें सुनने के खातिर आगई।

"च् · च् · च् · बेचारा पति नहीं, बल्कि गुलाम है। पुरुषो
धिकार-पूर्ण सत्ता के युग में सचमुच वह महान आश्चर्य की बात
'

एक पढ़ी-लिखी गृहिणी ने हसते हुये यह व्यंग कसा, जो अपने
मे बहुत प्रभावशाली है। इसका तात्पर्य भी स्पष्ट है।

धन्ना किसी सरकारी महकमे में चपरासी है। दफ्तर जाने से
साहब के बंगले पर जाकर सलाम मारना जरूरी है। जब से वह
हुआ है, तभी से यह कार्य एक धार्मिक अनुष्ठान की तरह वह
त करता आ रहा है। इसमें किसी भी प्रकार की भूल नहीं—
र रखता है।

इसके उपलक्ष में निश्चित रूप से उसे कोई बेगार मिल जाती
र से किसी भी तरह का सौदा लाने से लेकर आटा पीसना
और धोबी से कपड़े लाने तक का काम उसमें शामिल है।
ने बीबीजी भी कोई हुक्म सुना देती है। उनसे फारिग होने
समय लग जाता है, इस वजह से दफ्तर पहुँचने में थोड़ी देरी
है। तब वहां नायब साहब उसे अच्छी खासी डांट पिला दे
अर्थ है कि वह उनके घर क्यों नहीं आया? उनकी इस
वे नाराज हैं—बेहद नाराज।

र धन्ना भी अभिनय करने में कुशल है। कुछ भी पता न

बड़ों का सिर

चलने देता ! सिर झुकाकर उसकी सारी झिड़कियों को पानी
तरह गटागट पीता चला जाता है ।

परन्तु आज की स्थिति भिन्न है। घर से ही वह विक्षुब्ध
निकला है, अतः वह बड़े साहब के बंगले पर भी जा नहीं पाया । आ
दोनों अफसर एक साथ आग्नेय नेत्रों से घूरेंगे । अफसोस तो इस बा
का है कि वह उनका किस तरह सामना करेगा ?

सच तो यह है कि दादी के सर-दर्द ने उसकी ऐसी-तैसी करदी
नहीं तो वह भी मस्तक ऊंचा करके दफ्तर में प्रवेश करता । उस असाम-
यिक घटना पर कुढ़ने से भी क्या । यद्यपि उसकी मानसिक स्थिति अना-
वश्यक रूप से अस्त-व्यस्त है, तथापि यह साधारण-सी बात वह भली-
भांति समझता है । इसके साथ वह उसके निराकरण का उपाय भी
मन ही मन सोच रहा है । उसकी गम्भीर मुद्रा से ऐसा ही ज्ञात हुआ ।

इतना ही नहीं कि एक ठण्डी आह भरने के अतिरिक्त उसके
पास कोई दूसरा विकल्प नहीं है ।

चाहे गर्मी की चिलचिलाती धूप हो अथवा शीत की सुहावनी
मीठी धूप, फिर भी इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता । छत पर खड़ी रह
कर दादी जब तक दो-चार घरों में ताक-झांक नहीं कर लेती, उसका
कलेजा ठण्डा नहीं हो पाता । उसकी अन्वेषक दृष्टि पत्थर की छतों
और ईंटों की दीवारों तक को भेद डालती है । कोई अपरिचित घटना,
किसी तरह की अनहोनी बात या कोई असाधारण प्रसंग इसके कानों
और आँखों से छिप नहीं पाते । कानों में पड़ी बात को एक दृश्य के
रूप में प्रत्यक्ष देखने की इसकी लालसा बनी रहती है । अपनी उत्कण्ठा
शान्त करने के अभिप्राय से वह आधी-आधी रात तक छत पर बेचैनी
से टहलती रहती है । न जाने कैसी बेकली है !

इस बेशर्म के मुँह लगे। किस का कलेजा है, जो बैठे-बिठाये उससे बैर मोल ले। यह तो वह बात हो गई कि आ बैल मुझे मार।

गाव को पाँव क्या ?

खोज करने के उपरान्त दादी का कथन सवा-सोलह आना सही निकला।

दूसरी घटना के सम्बन्ध में दादी की घोषणा अनपेक्षित रूप से आश्चर्य-जनक निकली।

जरा सुनिये और जायजा लीजिये।

जानकी किसी कन्या स्कूल में अध्यापिका है। उसके एक जवान विधवा बेटी है। नाम है उसका केसर। दिन भर घर में रहती है और किसी न किसी काम मे अपने मन को लगाये रखती है। कम से कम खामोशी को पीती हुई यह तनहाई उसे अधिक बेकरार न करे। शायद इसके पीछे यही मानवोचित भावना काम करती है।

अक्सर उनके घर एक चौधरी पास के किसी गाँव से आया करता है। गाड़ी पर कभी घास, लकड़ियाँ और धान के बोरे भर कर ले आता है। उन्हें शहर में बेचकर उनके बदले में आवश्यक सामान खरीद कर ले जाता है। इस बीच लौटते वक्त वह दो-चार दिन के लिये विश्राम करने के उद्देश्य से उनके घर ठहर जाता है।

वह जानकी का धर्म-भाई है और केसर का है धर्म-मामा। ऐसा ही कुछ सम्बन्ध वे मोहल्ले वालों को बताती आ रही है। बेहद बातूनी, मिलनसार और हंसमुख। एक तरह से खुश मिजाज और उसका ... गया था, गली में शीघ्र ही लोक-प्रिय ... का खिताब मिल गया। एक समय ... में ... व्यक्ति बन गया और ... भी अधिक घनिष्टता ... ने चौधरी ने हँसकर ... बहार लुटलता है।

पड़ा हुआ परदा एकदम उलट गया।

है न कमाल !

ऐसी कई अनेक चमत्कार-पूर्ण घटनायें हैं, जिनके अन्वेषण का श्रेय केवल दादी को ही है। वह इसकी विशेषज्ञ है या और कुछ, ठीक-ठीक कहना कठिन है ! समयाभाव के कारण अभी उनका ज़िक्र बड़ी विवशता से छोड़ना पड़ रहा है, इसका खेद है !

–

दादी की पुरानी ओढ़नी में आज फिर नई दो थेगलियें या पेवन्द और लग गई, आश्चर्य है ! पहले की पांच और इस बार की दो, कुल मिलाकर पूरी सात हो गई। गणना में कोई गलती नहीं।

'दादी ! तू इतनी कन्जूसी क्यों करती है ?'— पड़ोसिन भला कहने कैसे चूकती "कपड़े धोने में तू घेले का साबुन नहीं खर्चती। सब्जी मिर्च-ममाला नहीं डालती। घी जैसी चिकनाई को तू कभी- ... में घुसने देती है। ... और मिट्टी का तेल... ।"

... होठों के पास व्यंग्यपूर्ण मुस्कान थिरक उठी, फिर भी ... की गरज से बोली— "इतनी पूंजी जोड़कर क्या करेगी ? ... के बाद संग ले जायेगी ... ?"

... बात थी, लेकिन सुनकर दादी एकदम ... लगा जैसे यह उसके सम्मान पर सीधा आघात है।

... सब्जो की मां ! क्यों बढ़-बढ़ के बातें करती है। ... खसम पेशकार है न, इसलिये दिमाग सातवें आस... इतनी कमाई कहां से आती है, सभी को पता ... यह याद रहे कि हराम की कमाई कभी पचेगी ... एक दिन जरूर निकलेगी। जो खोटे किये हैं,

जल्दी ही सर्दी लग गई । जुकाम हुआ और बिगड़कर ज्वर का रूप धारण कर गया ।

देखते ही देखते वह खाट से लग गई ।

स्पष्ट है कि दादी की यह बीमारी चिन्ताजनक है कष्ट-साध्य है । इस पर परेशानी का कारण तो यह है कि वह अस्पताल की दवा लेने से साफ इन्कार करती है । बस, एक तुलसी-दल और ठाकुरजी का चरणामृत लेकर ही वह सन्तोष कर लेना चाहती है । अपना-अपना विश्वास — अपनी-अपनी मान्यतायें ।

अब बेचारा अमर करे भी तो क्या । इस हठीली और जिद्दी औरत के आगे वह हार मान चुका है । कई बार समझाया-बुझाया, मगर सब व्यर्थ । वही कुत्ते की पूंछ टेढ़ी की टेढ़ी । आस-पास के पड़ोसियों ने भी विनती करली । बीमारी के दिनों में किसी प्रकार का व्रत अथवा अनुष्ठान करना बुरा होता है । इससे अनिष्ट की सम्भावना बढ़ जाती है । फिर भी दादी ने एक बार 'नहीं' कहकर 'हां' कभी नहीं भरी, जैसे इससे हेटी होती है ।

अन्त में इसका दुष्परिणाम तो भुगतना पड़ा ।

भला काल ने किस पर दया की है । किंवदंती प्रचलित है । कहते हैं कि एक दफा महाबली रावण ने भी अपने बाहु-बल के द्वारा इसे पराजित कर दिया था । कदाचित वह इस अपमान की यन्त्रणा को कभी नहीं भूला । अवसर देखकर उसने लंकापति का अन्त कर दिया । ऐसा निर्दयी और बर्बर है यह ।

बैठी। इस अकेलेपन की उधेड़-बुन को खत्म करने के लिये दूसरे परिचित का संग अत्यन्त लाभ-कारी है। मन भी बहल जायेगा और भीतर का निरर्थक आवेग भी किसी न किसी तरह रुक जायेगा, ऐसा विश्वास किया जा सकता है।

वह उत्सुक हो द्वार की तरफ देखने लगी।

उस महिला ने बड़े संकोच के साथ घर में पदार्पण किया और अपने आप में सिमट कर माची के पास फर्श पर बैठ गई।

दादी का एकदम सूखा मुंह देखकर उसने पूछ लिया—"क्या बात है दादी ? तेरी तबीयत तो ठीक है न ?"

"कोई चिन्ता की बात नहीं।"—दादी ने फीकी सी मुस्कान के बीच अनमने भाव से उत्तर दिया।

"अच्छा।"

थोड़ी आश्वस्त होकर भीखू की मां ने अपनी ओढ़नी की गांठ खोली। उसमें से दस-दस के कुछ नोट निकालकर बोली—"लो, दादी ! ये रुपये।"

दादी ने उतावली में रुपये गिने। इसके पश्चात् उसने अचरज से कहा—"ये तो सिर्फ पचास ही हैं।"

"इस बार मैं पूरे नहीं दे सकूंगी।"

उस महिला का स्वर उदास है।

दादी को अचानक गुस्सा आ गया। उसकी कण्ठ-वाणी भी अस्वाभाविक रूप से प्रखर हो गई।

"क्यों ? जब लेने आती हो तो वादा और होता है। देने आती हो तो उस वक्त बहाना कुछ दूसरा होता है। यह सब क्या है ··· ?"

अत्यन्त अनुदार और असहिष्णु बनकर दादी ने दृष्टि भीखू की मा के चेहरे पर गड़ा दी।

लेकिन उधर से कोई जवाब न

तरह उबल पड़ी।

"…… मैं अपने पूरे पैसे लूंगी और ब्याज भी नहीं छोड़ूंगी । समझी ।"

इस लज्जास्पद स्थिति में पड़कर उस महिला की आंखें नीची हो गई । वह क्या करे ? मजबूर है । गरीबी और बेकारी किसी को भी नहीं छोड़ती ।

"दादी ! इस बार मुझे माफ कर दे ।"—भीखू की मां कातर स्वर में गिड़गिड़ाई—"अगली बार पूरे दे दूंगी । क्या करूं ? भीखू कई दिनों से बेकार है । घर में दो वक्त की रोटी के भी लाले पड़े हुये हैं और… ।"

"मैं कुछ नहीं जानती ।"—दादी अधिक तीखी हो गई, निर्मम स्वर में बोली "मैंने कोई तुम लोगों को खिलाने का ठेका ले रखा है … ।"

'दादी ! थोड़ी दया कर … दया कर , तेरे हाथ जोड़ती हूं … ।"

भीखू की मा के नेत्र हठात् आर्द्र हो आये ।

"अहः हः हः क्या सूरत बनाई है ! अहा … हा … शक्ल तो देखो इसकी , इसलिये कहती हूं कि तुम लोग अपनी नीयत क्यों खराब करते हो । फिर वैसे ही फल भोगते हो और दोष देते हो अपने भाग्य को ।"

अब दादी का आवेश में बड़बड़ाना शुरू हुआ तो सहज ही रुकने का नाम नहीं । वह काफी देर तक धारा-प्रवाह चलेगा, इसमें कोई सन्देह नहीं ।

उस दिन असमय का स्नान दादी के लिये घातक सिद्ध हुआ ।

जल्दी ही सर्दी लग गई । जुकाम हुआ और बिगड़कर ज्वर का उग्र रूप धारण कर गया ।

देखते ही देखते वह खाट से लग गई ।

स्पष्ट है कि दादी की यह बीमारी चिन्ताजनक है, कष्ट-साध्य है । इस पर परेशानी का कारण तो यह है कि वह अस्पताल की दवा लेने से साफ इन्कार करती है । बस, एक तुलसी-पत्र और ठाकुरजी का चरणामृत लेकर ही वह संतोष कर लेना चाहती है । अपना-अपना विश्वास – अपनी-अपनी मान्यतायें ।

अब बेचारा धन्ना करे भी तो क्या । इस हठीली और जिद्दी औरत के आगे वह हार मान चुका है । कई बार समझाया-कसमें दिलाई, मगर सब व्यर्थ । वही कुत्ते की पूंछ टेढ़ी की टेढ़ी । आस-पास के पड़ोसियों ने भी विनती करली । बीमारी के दिनों में किसी प्रकार का व्रत अथवा अनुष्ठान करना बुरा होता है । इससे अनिष्ट की सम्भावना बढ़ जाती है । फिर भी दादी ने एक बार 'नहीं' कहकर 'हां' कभी नहीं भरी, जैसे इससे हेठी होती है ।

अन्त में इसका दुष्परिणाम तो भुगतना पड़ा ।

भला काल ने किस पर दया की है । किंवदंती प्रचलित है । कहते हैं कि एक दफा महाबली रावण ने भी अपने बाहु-बल के द्वारा इसे पराजित कर दिया था । कदाचित वह इस अपमान की यंत्रणा को कभी नहीं भूला । अवसर देखकर उसने लंकापति का अन्त कर दिया । ऐसा निर्दयी और बर्बर है वह ।

तब फिर दादी की क्या बिसात !

भोर के तारे के उगने से पूर्व ही धन्ना दोतातुर कण्ठ से चीख पड़ा । मोहल्ले-गली के लोग अच्छी तरह समझ गये । अब दादी इस संसार में नहीं है । उनके इस असामयिक निधन पर सभी दुखी हैं । वे सहानुभूतिवश उठकर अपने घरों से चले आये और धन्ना के निकट बैठ कर संवेदना प्रकट करने लगे । इसका विपरीत प्रभाव पड़ा । इस

सान्त्वना से बेमौलाद धन्ना एक दम फफक पड़ा। लेकिन इस शोकाकुल घड़ी में उनका तो पड़ोसी होने के नाते यही कर्त्तव्य है।

इस बीच औरतों का समूह भी आस-पास मण्डराने लगा। सबसे पहले उन्होंने लाश को सम्हाला। उसे माची से उठाकर गोबर से लिपे फर्श पर नीचे रखा। एक लोटा पानी देह पर डालकर उसे शुद्ध करने की प्रमुख धार्मिक क्रिया पूर्ण की। इसके बाद दूसरे धुले हुये कपड़े पहनाकर एक रंगीन दुशाले से लाश को पूरी तरह ढक दिया। तुलसी-पत्र और गंगाजल भी मुंह में डालकर उसे बल-पूर्वक बंद कर दिया। विस्फारित आंखों की पलकें भी धीरे से मूंद दी।

खेद है कि धर्म-भीरु और कर्त्तव्य-परायण दादी को गंगा जल भी दम निकलने के पश्चात् ही मिला। हाय रे दुर्भाग्य! विचित्र विडम्बना है।

फोकी-फीकी सुबह तक अच्छी खासी भीड़ इकट्ठी हो गई। दादी को श्रद्धांजलि अर्पित करने के उद्देश्य से गली-मोहल्ले के तमाम लोग आ गये। दारुण दुःख की इस वेला में वे सब धन्ना को धीरज रखने का परामर्श दे रहे हैं।

एक ओर गीता का पाठ हो रहा है तो दूसरी तरफ धन्ना अपनी जीवन-सहचरी की चिर विदा की घड़ी में अभी तक करुण कण्ठ से सिसक रहा है। उसकी असहाय-सी अश्रु-मुखी मुद्रा दिल में टीस उत्पन्न करती है।

"राम-नाम सत्त है ...।"

इस शोर के साथ अर्थी उठी। सभी आंखें शोकार्द्र हैं। गली में कुछ ऐसी कमजोर दिल की औरतें भी हैं, जो एकाएक आंचल मुंह पर रख कर क्रन्दन करने लगीं। अपनी प्यारी-प्यारी दादी से बिछुड़ने का दुःख कितना गहरा है, इसका सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है।

कहने की आवश्यकता नहीं कि आज दादी के बिना घर-द्वार

और गली-गवाड़ सूनी-सूनी है । कहां है दादी की वे रसीली बातें
रोचक गप्पें ? कहां हैं वे उसकी मीठी-मीठी गालियां ? कहा है
वे दिल फरेब शिकायतें ? लगता है, जैसे वे उन्हें अपने आंच
समेट कर संग ले गई ।

क्या कभी फिर ऐसी अद्वितीय और अद्भुत दादी को पा
यह मोहल्ला निहाल हो सकेगा ? इसका उत्तर इस समय देना कठि
है ।

यूं अभी से सभी धन्ना के भविष्य के सम्बन्ध में चिंतित हैं
बेचारा लाचार दीन-हीन बुड्ढा ! कौन उसकी सेवा करेगा ? इ
उम्र में कौन उसकी देख-भाल करेगा ? वास्तव में दया का पात्र है वह
वाहरे क्रूर विधाना ! कैसा बदला लिया है इस गरीब और बेकस इंसान
से ? कोई पानी पिलाने वाला भी पीछे नहीं छोड़ा । और तो और
इतने बड़े घर में वह भूत की तरह अकेला पड़ा रहेगा, जिसमें मरघट
की सी शान्ति व्याप्त है । उसकी कठोर दीवारें एकदम चुप हैं, फिर
भी इस चुप्पी में भी पथरीले होठों से एक ऐसा करुणाप्लावित स्वर
नि:सृत हो रहा है, जो मर्मान्तक है प्राण-घातक है ।

निश्चय ही आज धन्ना की आंखों में भयानक उदासी समा गई
है ।

जल्दी ही अर्थी एक हल्के से कोलाहल के साथ श्मशान-घाट
पर पहुँच गई ।

देखते ही देखते चिता सजी । बड़ी लकड़ियों के ऊपर लाश को
रखा, फिर छोटी-छोटी पतली लकड़ियें, उस पर रखने का
काम शुरु हुआ । असल में यह चतुराई का काम है । अगर लकड़ियों
के जमाने का कार्य ठीक ढंग से नहीं होगा, तो लाश भी अच्छी तरह
नहीं जलेगी ।

इसी समय एक आश्चर्य-जनक चमत्कार-हुआ ।

सभी ने विस्फारित नेत्रों से देखा कि लाश अपने आप हिलने

लगी। उसमें धीरे-धीरे गति उत्पन्न हुई और अकस्मात् हाथ-पैर हरकत करने लगे। इसके साथ ऊपर रखी वे छोटी-छोटी लकड़ियें नीचे गिर पड़ी।

"अरे !"

वहां उपस्थित सारा जन-समुदाय भौंचक्का रहकर चिल्लाया। एक पल, दो पल और न जाने कितने पल इस अद्भुत् दृश्य को अपलक देखने में बीत गये। इस बीच चारों ओर सन्नाटा-सा छा गया। लगा मानों घूमती हुई धरती अपनी कील पर स्थिर हो गई है। हवा थम गई है और पेड़-पौधों ने असह्य चुप्पी साधली है। वातावरण एक गहरे शून्य में विलीन हो चुका है।

'मैं ·· कहां ··· ?"

अस्फुट स्वर में कहती हुई दादी अचानक चिता पर उठ बैठी और चकित नेत्रों से आस-पास देखने लगी।

वहां कुछ दुर्बल हृदय के लोग भी उपस्थित हैं जो भयभीत कण्ठ से हठात् चीख पड़े।

"भू ··· ऊ ···ऊ ···त !"

●

अर्थी के फूल

•
•

रात पूरी तरह ढल चुकी। एक के बाद एक सभी छोटे-मोटे तारे छिप गये। दिन उगा और उजली-सुहानी सुबह जगी। ओस में भीगी बेसुध पहाड़ियाँ, पहाड़ियों में ऊंघते अनमने जंगल और उनसे काफी दूर स्थित यह छोटा-सा कस्बा, जैसे घने काले बालों के बीच एक बड़ा पीला गुलाब लगा हुआ-सा।

पूर्व के स्वच्छ आकाश में सूर्योदय देखने के उद्देश्य से कई एक श्रद्धालु स्त्री-पुरुष अपने-अपने घरों की छतों पर आये। कुछ ऐसे भी हैं, जो बड़े आंगन में खड़े होकर भगवान् भास्कर को श्रद्धापूर्वक एक लोटा जल अर्पित कर रहे हैं।

ठीक इसी समय पड़ोस के किसी घर में से एक चीत्कार बीच

सुन कर सभी चौक पड़े । ऐसा ज्ञात हुआ, मानों मधुर स्वर में बजते हुए सितार का तार किसी माकस्मिक आघात से टूट गया। देखते ही देखते सभी लोगों की आँखें और कान उसी घर की ओर आकृष्ट हो गये । उनमें एक बड़ा-सा प्रश्न चिन्ह है ।

निश्चय ही यह बाबू रामप्रताप का पुराना मकान है, जो असमय में शोक की काली छाया से ढक चुका है । खूब याद है । उनके बेटे की बहू पिछले कई महीनों से बीमार चली आ रही है । कदाचित् उसका जीवन-दीप आज बुझ गया है।

थोड़ी ही देर मे संशय का वह हल्का सा भाव विश्वास और निश्चय मे बदलने लगा ।

देखते-ही-देखते पूरे घर में हाहाकार मच गया । मृत्यु ने अपने भयकर झंझावात से परिवार की सुख-शान्ति प्रायः नष्ट कर दी । अब तो छोटे-मोटे सभी के कलेजे शोकाकुल हैं अधीर हैं ।

कुछ ही देर में श्वासोच्छ्वास को खींचकर सम्मिलित स्वर का वह रोदन दूर-दूर तक गूजने लगा । स्त्री, पुरुष और बच्चों का यह क्रन्दन बड़ा ही करुणाप्लावित है । एक सरीखा, एक लय का, एक साथ सिसकियां भरता हुआ यह स्वर अत्यन्त हृदय-विदारक है । कुछ दबे और कराहते हुए गीले कण्ठ बीच-बीच मे सुनाई पड जाते हैं। शायद वे बड़ी आयु के रिश्तेदार हैं,जो इस असामयिक निधन पर अत्यन्त दुःखी हैं ।

इस बीच शोक प्रकट करने वाले पड़ोसी और सान्त्वनादाता मित्रों की काफी भीड़ एकत्रित हो गई । परिवार के व्यक्तियों ने इस संवेदना और सहानुभूति के प्रति उनका हार्दिक आभार व्यक्त किया । उन्ही मे से कुछ समझदार नवयुवक अपनी साईकिलें लेकर बाजार की तरफ चल पड़े, जहां से वे दाह-संस्कार के लिए कुछ जरूरी सामान खरीदेंगे । अर्थी के वास्ते बांस, कफन, दुशाला, रेजगी और आगे-आगे फेंकने के लिए फूलियें लाना भी वे कैसे भूल सकते हैं ।

[illegible] को कफ़न से थोड़ा [illegible] उखड़ रहे हैं फिर भी मरता मा बटा लेकर पहुँचे गए — "यह [illegible] करें। [illegible] का लीजिए।"

"देखिये, रोते-रोते वह बेहाल हो गया है।" यह किसी युव-[illegible] का भीगा हुआ कण्ठ-स्वर है, जो साथ में ध्वनित हो गया 'सचमुच, दोनों में बड़ा प्यार था।'

यह सुनते ही विनय का [illegible] बना [illegible] एक बार फिर जोर से सिसक उठा। घूमकर कई लोगों ने उसे सहानुभूति की निगाहों से देखा।

इस बीच लाश का शुद्धिकरण हो जाता है। उसे नहलाकर नये कपड़े पहनाये गये हैं। वह अब घर के आँगन के बीचों-बीच सुरक्षित रखी है, जहाँ से अर्थी में बांध कर सीधे श्मशान की तरफ उसे ले जाया होगा।

विशेषकर स्त्रियों के द्वारा प्रत्येक कार्य निर्विघ्न सम्पन्न हो चुके हैं। लाश को गंगा जल से पवित्र करके अशौच को जल्दी ही दूर कर लिया गया है।

बहू सुहागन है, अतः उसे नया जोड़ा पहनाना बहुत जरूरी है। मौत आने से घर और समाज के रीति-रिवाज मर थोड़े ही जाते हैं, वे तो अमर हैं। भले ही निर्जीव शरीर सामने रखा हो।

भारी मन से लाश की मांग में गहरा सिंदूर भरा, स्पन्दन-हीन पलकों को काजल लगाया। सूखे ठूंठ के समान निष्प्राण हाथों में चूड़ियां पहनाईं। लोक-लाज की परवाह करते हुए एकाध सोना और चांदी का सस्ता सा गहना लाश के कान-नाक में डाला, जिस पर मन ही मन उन्हें खेद है। उनका वश चलता तो आंखें बचा कर वे इस रस्म को पूरी अनदेखी कर जाते। लेकिन अफसोस तो इस बात का है कि सभी स्त्री-पुरुषों की निगाहें लाश पर केन्द्रित हैं, जैसे वे यहां छिद्रान्वेषण करने ही आये हैं।

कायदा तो यह है कि जीवित सुहागन की भांति लाश को भी पूरा पूरा शृंगार कराया जाता है, फिर भी समय-समय पर कुछ नियमों में छूट अपने आप ही हो जाती है। दबी जबान से प्राय विरोध होता है। इस पर समझदार व्यक्ति मौन धारण कर लेते हैं। वे अच्छी तरह जानते हैं कि कभी न कभी उनके घर में भी ऐसी मृत्यु हो सकती है। तब एक उदाहरण-स्वरूप यह अच्छा बहाना मिल जायेगा। फिर मिट्टी के पीछे कौन इतने धन का अपव्यय करे। इसमें कोई बुद्धिमानी नहीं। एकदम मूर्खता की बात है। बस परम्परानुमोदित रीति को ही किसी न किसी तरह निभाते चलो, यही ठीक है।

स्त्रियों के जमघट में मरने वाली बहू की सगी सास, काकी सास, भूआ सास आदि बड़ी बुढ़ियें नज़ सुजाये हुए बैठी हैं। इनके अतिरिक्त बहू की दूर के रिश्ते की कुछ जिठानियां, देवरानियां और भाभियां भी दिखाई पड़ रही हैं। वे सभी शोक-मग्न हैं। रोने के कारण उनकी भी आंखें लाल हैं। यद्यपि उनकी अस्थिर जीभ कभी-कभी फुसफुसाहट की हल्की सी ध्वनि कर बैठती है।

अपने क्लान्त-कातर नेत्रों को विस्फारित करते हुये प्रकाश की

मां व्यथातुर स्वर में चीख पड़ी ।

"ओ, मेरी लाड़ली बहू ! ओ, मेरी आंगन की ज्योति ! ओ, मेरी घर की शोभा ! तू हमे छोड़ कर कहां चली गई ... कहां चली गई ... ? ।"

इसके पश्चात् उनके विलाप का स्वर पुनः अवास्तविक रूप से कर्ण-कटु एव प्रखर हो गया । शीघ्र ही इसकी अनुकूल प्रतिक्रिया हुई, जो ऐसे समय में आकस्मिक तथा अस्वाभाविक नहीं कही जा सकती । बात की बात में कुछ स्त्रियां अधिक निकट आ गई और सहानुभूति-शील बनकर उन्हें सान्त्वना देने की चेष्टा करने लगी । उनके भी लगभग हृदय भर आये । सास सिर धुनकर कुछ देर के लिये रोने का जैसे सफल अभिनय करती रही ।

पर्याप्त समय बीत गया । इस प्रकार की मनचाही वीभत्स और शोक विह्वल स्थिति मे बैठे रहना प्राय. दूभर हो जाता है । सारा वातावरण अनायास ही असहनीय अप्रीतिकर और घृणास्पद भावना से भर जाता है । उसमे से न जाने कैसी दुर्गंध आने लगती है ! शायद मौत की कालिमा अपने पीछे यही सब छोड़ जाती है ।

घर-भर में छाये उस स्तब्ध सन्नाटे के बीच कभी-कभी कोई एक धीमे कण्ठ से अचानक सुबक पड़ता है । इस शोक की घड़ी में उत्पन्न चिर वियोग की अपरिहार्य विवशता मे जकड़े गए दिन के कई-कई मन का बोझ सा अनुभव हो रहा है । यही दुःख और खेद का मूल कारण है ।

अकारण ही स्त्रियों के एक दल में अचानक अस्पष्ट-सी फुसफुसाहट आरम्भ हो गई । शुरू-शुरू मे कुछ अनमने ढंग से दबे हुए स्वर में, किन्तु फिर वह सहसा तीव्र हो गई । ऐसा ज्ञात हुआ कि लम्बी चुप्पी से वे सभी धीरे-धीरे ऊब और घुटन-सी अनुभव करने लगी । इस अवधि मे सामूहिक विलाप का कार्य-क्रम एक प्रकार से बंद है । अब तो वह लाश उठने के साथ ही फिर तेजी से प्रारम्भ होगा । उसकी प्रतीक्षा है ।

"सचमुच, बहू का पदार्पण इस घर में बड़ी ही शुभ घड़ी में हुआ था। इससे प्रकाश की माँ को उसके रहते कोई कष्ट नहीं हुआ"

"अरे, उसके आगमन के बाद से तो इस घर में दिन-दूनी और रात चौगुनी बढ़ोत्तरी होती गई।"

· "ढेर सारा दहेज लेकर आई थी बहू...!" एक प्रौढ़ महिला अपने मन में मचलते वाले उबाल को निकाल कर ही मानी "मैंने अपनी आंखों से देखा था ..।"

"बेचारी थी गऊ जैसी सीधी और भोली ..।"

"रोना तो इसी बात का है।"—मध्य में ही प्रकाश की मा अवसाद-ग्रस्त नाटकीय भाव को प्रदर्शित करती हुई मंद-मंद कण्ठ से बोली—"कहा खोजूं उस लक्ष्मी सी बहू को ।"

उनके कथन में यदि कोई उद्रेक होता है तो वह केवल करुणा का, न कि किसी अन्य भावना का। यह उनकी मुखांकित रेखाओं से स्पष्ट हो जाता है।

वहाँ घोर शोक और विषाद की छाया पर्याप्त गहरी हो गई। घड़ी भर के लिये मानो सभी की श्वास-गति लगभग रुक-सी गई। इस पर एक प्रौढ़ महिला दिलासा देने की कोशिश करने लगी। ये सम्हल कर धीरे-धीरे कहने लगी—"प्रकाश की मा! जो चला गया, उसके लिये रोना बेकार है। अब तुम्हें अपने बेटे की तरफ और अधिक ध्यान देना चाहिये।"

"क्या मतलब?"—प्रश्न भरी आंखों से पूछकर सास ने अपने आसूं रोके।

"मतलब की भी तुम ने खूब पूछी।' कुछ रुक-रुक कर अर्थ-वती मुस्कान के बीच वह प्रौढ़ा स्पष्टीकरण देने लगी—"मेरी दो भानजियाँ हैं खूबसूरत, जवान और पढ़ी-लिखी। उनमें से किसी को भी तुम अपने बेटे प्रकाश के लिये पसन्द कर सकती हो। तेरा भरा पूरा घर वे अच्छी तरह सम्हाल लेंगी। भले-बुरे की जिम्मेदारी मैं खुद

एकदम मानों बूढ़ा कट कर रह गई। आवेश में मन ही मन बड़बड़ाई—"बड़ी आई है स्कूटर लेने वाली। भले ही बेटे को ठीक से साईकिल चलानी आती भी न हो, फिर भी ये स्कूटर लेंगीं। बीस तोले खरे सोने के गहने चाहिए, चाहे खुद के घर में इनसे चौथाई गहने भी न हों ··· हुँम्······ !"

अब वे मन मार कर चुप हो गईं।

अर्थी बनकर तैयार है। दो आदमी लाशों को उठा कर भीतर आंगन में ले आये, जहां पंडित जी अन्तिम समय का विधान परिवार के व्यक्तियों के समक्ष मंत्रोच्चारण के द्वारा कर रहे हैं। सभी के नेत्र गीले हैं। इस पर भी पूरे कार्य को विधि-पूर्वक सम्पन्न करने के लिये उनकी असामान्य रुचि देखते ही बनती हैं।

लगभग चार-पांच व्यक्तियों ने मिलकर लाश को उठाया और उसे अर्थी पर लिटा दिया। कफन के ऊपर दुशाला डाल कर उसे रस्सियों से बांध दिया, ताकि वह बीच मार्ग में हट न जाये।

अभी तक ब्राह्मण-देवता नारियल, गंगाजल और तुलसी-पत्र लेकर कुछ शेष धार्मिक अनुष्ठान पूर्ण करने में संलग्न हैं। शब्दों के उच्चारण करने की मंद-मंद ध्वनि हिलते हुए होठों से सुनाई पड़ जाती है।

प्रकाश की मां के आस-पास होने वाले वार्तालाप ने कई अन्य स्त्रियों का ध्यान आकर्षित किया। उनकी भी अचानक असाधारण दिलचस्पी बढ़ गई। वे सारी बातें जान लेने के लिए उत्सुक मालूम पड़ती हैं। इस कारण वे जिज्ञासावश उनके अधिक समीप आ गईं। उनमें से एक बुढ़िया अनुकूल अवसर देखकर धीमे कण्ठ से बोली "मेरे देवर की भी एक लड़की है। मैं समझती हूँ कि वह प्रकाश के लिये बिल्कुल ठीक रहेगी।"

"कैसे ?" प्रकाश की मां ने प्रश्न-भरी दृष्टि से उसकी ओर निहारा।

"वे अच्छे पैसे वाले हैं। इनके सिवाय वे ठेके का काम भी करते हैं, जिनमें लाखों कमाते हैं।"

"अच्छा !" सास का प्रलोभित मन हठात् मचल गया।

"वे मुंह मांगा सोना देंगे और स्कूटर भी ...। वे यह कहते हैं कि अगर सौभाग्य से अच्छा घर-वर मिल जाय, तो दहेज में एक सुन्दर सा मकान भी देंगे ...।"

"अरे वाह !...ऐसा...!"

सास के मुंह में पानी भर आया। कुछ देर के लिये आगन में पड़ी बहू की लाश एकाएक उनके दृष्टि-पथ से ओझल हो गई। और तो उसके स्थान पर नये जोड़े में सुशोभित नई बहू की सजीव मूर्ति सामने आ गई, जो ढेर सारे गहनों से लदी घूंघट काढ़े गृह-प्रवेश की रस्म पूरी कर रही है। वहां उसे नये हर्षोल्लास के बीच उचित अधिकार मिलेगा। नई मर्यादा से अलंकृत एक नई प्रतिष्ठा भी मिलेगी।

'पर एक बात है, जो ...।"

बुढ़िया के इस अधूरे वाक्य का स्वर अनावश्यक रूप से कुछ लम्बा हो गया, जो ऐसे समय में बिल्कुल उचित जान नहीं पड़ा।

प्रकाश की मां सहसा चौकन्नी हो गई। इस पर भी उसका लोभी मन किंचित संदेह और अविश्वास का भाव लेकर अधैर्य से पूछ बैठा—"क्या बात है ...... ?"

"ऐसे तो कोई विशेष बात नहीं है, फिर भी ... भी ...।" बुढ़िया ने अपनी बात बीच में ही आधी छोड़ कर एक बार अपनी सशंकित दृष्टि से आस-पास देखा, तत्पश्चात् कहने लगी 'फिर भी मैं यह साफ कह देना चाहती हूँ कि यूं वह लड़की ज्यादा पढ़ी-लिखी नहीं है ... और ... वह एक आंख से भेंगी भी देखती है ...।"

"बस इती सी बात है ...।"

उन्माद

कस्बे की सुरम्य घाटी मे ठण्डी बर्फीली हवा जब खामोश हो चुकी है, तब कहीं मन की आकांक्षाओं को पूर्ण करने वाली गर्म हवा आरम्भ हो गई। वह बसन्ती पुष्पों की पखुड़ियां खोलने और उनसे सौरभ का पान करने के लिये बड़ी मस्ती मे मचल रही है। चारों ओर हर्षोत्फुल्ल वातावरण व्याप्त है।

इस सुहावने और रमणीक मौसम में भी उसका दिल बुझा-बुझा सा है। मकान के ऊपरी मंजिल का यह एक अकेला कमरा उसके भीतर अजीब किस्म की रिक्तता भर रहा है, जो शून्य की भावना के कारण भाराक्रान्त है—बोझिल वे निराशा और उदासीनता की मटमैली छाया जैसे एक साथ उसकी तरफ बढ़ रही है। लेकिन यह

उनसे दूर हटने की स्थिति में बिल्कुल नहीं है, ऐसा ही अनुभव हुआ। यह निस्सन्द और अस्वाभाविक परिवेश मानसिक यंत्रणा की एक ऐसी परिधि से घेर रहा है, जिससे बाहर निकलना असम्भव-सा ज्ञात होता है।

इधर कई दिनों से वह खुद अपनी जीजी के घर आया हुआ है। जीजाजी बहुत बड़े अफसर हैं। उनकी सिफारिश से उसको किसी व्यापारिक संस्थान में इन्टरव्यू देना है। असल में उसका यहां पर सिर्फ इतना ही काम है।

अक्सर जीजाजी तो बाहर पर रहते हैं। शेष घर में रह जाती हैं केवल दो महिलायें, एक तो खुद गृह-स्वामिनी और दूसरी उनकी ननद संतोष! उसके सम्बन्ध में पहले भी वह बहुत सुन चुका है। वैसे जीजी जब अपने पीहर आती हैं तो उसके बारे में ढेर सारी बातें करती हैं। बहुत सी चर्चायें तो चिन्ता के रूप में और बहुत सी कहा-नियां तो प्रशंसा के रूप में वे कह जाती हैं। उनकी परेशानी का सबसे बड़ा कारण तो यह है कि उनका ननद संतोष का स्वभाव तेज है— मिजाज तीखा है। जल्दी ही तैश में आ जाती है। इससे कई दफा अप्रत्याशित उलझनें पैदा हो जाती हैं। कुछ जटिल समस्यायें भी खड़ी हो जाती हैं, जिनका समाधान मनचाहे नहीं हो पाता। हो सकता है कि यह क्षति-ग्रस्त आत्म-विश्वास का परिणाम हो। कदाचित् यह क्षीण इच्छा-शक्ति और हीन-भावना की सूचक हो। इस पर भी क्षोभ की भावना को छिपा पाना एक तरह से मुश्किल है। बावजूद इसके भी वह कुछ समझती नहीं। अपनी आत्म-रक्षा तथा आत्म-स्वाभिमान के नाम पर मानापमान का ध्यान रखे बगैर वह किसी के साथ भी दुर्व्य-हार तक कर बैठती है। यह असहनीय स्थिति सभी के लिये बर्दाश्त के लायक नहीं। व्यर्थ में तनाव और दुर्भावना बढ़ती है। निश्चय ही ऐसा सोचना अप्रासंगिक नहीं लगता।

जहां तक प्रशंसा का प्रसंग है, वे उसकी सच्चरित्र और निर्भीक

प्रकृति से काफी प्रभावित हैं । किसी भी लड़के में इतना साहस
कि उससे कोई छेड़खानी करले । क्या मजाल है, कोई उसकी
आंख उठाकर भी देख ले । जरा-सी बदतमीजी पर पर कई बा
आम सड़कछाप मजनूओं का पानी उतार चुकी है। कॉलेज का न
वर्ग उसके नाम से थर्राता है ।

इतना परिचय मिल जाने के पश्चात् उसके यहां आने से
ही अपनी भूमिका निश्चित करली । किस प्रकार बातचीत करेग
कैसे व्यवहार करेगा, यह सभी कुछ वह पहले ही तय कर चुका
इससे कहीं भविष्य में किसी भी तरह की अड़चन पैदा न हो,यह भा
कभी की खतम करली गई है । इसी सन्दर्भ में संतोष से अधिक
अधिक दूर रहने का भी उसने मन ही मन संकल्प ले लिया है । अन्त
है, अनावश्यक रूप से अकारण ही परस्पर कोई टकराव नहीं हो।

यहां आते ही सर्वप्रथम जीजी से भेंट हो गई । वे प्रसन्न हैं
यूं भी वह पहलीबार यहां आया है, अतः उन्होंने बड़े उत्साह से उसक
स्वागत किया । घर के हाल-चाल पूछे । माताजी द्वारा भिजवाया
गया सामान उनके हवाले करके वह अपने ठहरने के कमरे का निरीक्षण
करने लगा।

जब वे वापिस लौटने लगीं तो बोली—"सन्तोष कॉलेज जाने
की तैयारी कर रही हैं, पहले उससे तुम्हें मिला दूं ।"

लेकिन उसने कोई विशेष उत्सुकता प्रकट नहीं की । वैसे ही
कह दिया—"जैसी तुम्हारी मर्जी !"

कुछ ही देर में वे हंसती हुई उसे खींच कर ले आई । सन्तोष
तो जैसे लजीली-शर्मीली बनी हुई अपने-आप में सिमट-सिकुड़ रही हैं।
नजरें नीची है, मानों एक-एक कदम को नाप कर चलना जरूरी है ।
सामान्य लड़कियों की तरह एक सकुच-भाव मुख पर लाकर वह चुप-
चुप सी है ।

सामने आकर जीजी उल्लासित कण्ठ से परिचय कराने लगी

द्रा में बोली—"स्वरूप, ये मेरी ननद सन्तोष ··· और सन्तोष, यह रा छोटा भाई स्वरूप।"
इसके पहले सन्तोष कुछ बोले, उसने अभिवादन की भंगिमा में हा "नमस्ते!"
"अब मैं चलूं।"- जीजी तनिक व्यस्त स्वर में बोली—"नीचे र सारा काम पड़ा है। मैं जब तक चाय लेकर आऊं, तुम दोनों आपस में बातें करो।"
वह जैसी शीघ्रता से आई थी, वैसे ही वापिस लौट गई।
घड़ी भर के लिये कमरे में सन्नाटा-सा छा गया। ऐसा लगा मानों उस स्तब्ध वातावरण में दो पत्थर के निर्जीव बुत खड़े हैं।
फिर झिझक के साथ सन्तोष ने गर्दन ऊपर उठाई और अपने नों हाथ जोड़ दिये।
"न ... म ... स्ते।"
स्वर जरूरत से ज्यादा मीठा है, शब्दों से ऐसा ही मालूम दिया।
सामने खड़ी इस रूप-गर्विता को स्वरूप अब टकटकी लगाकर खने लगा। उसकी दृष्टि मानों स्थिर हो गई। स्पष्ट है कि उसका सौन्दर्य, उसका रंग और उसकी चितवन को किसी भी प्रकार का कथन करने की कोई आवश्यकता नहीं। तरारे हुये होंठ कुछ बोलना चाहते हुये भी खुल-मुलकर फिर बार-बार बंद हो जाते हैं। पतली-सी नाक और उस पर वे मर्म स्पर्शी आंखें! इस गोल चेहरे पर इतनी ड़ी आंखें भगवान ने पता नहीं किस तरह बिठाई होंगी।
कुछ देर तक वह विस्मय से सोचता रहा।
ठीक कुछ ऐसा ही हुआ, जैसे एकाएक तेजस्वी प्रकाश पर नजर पड़ जाने के कारण नेत्रों में अजीब किस्म की चकाचौंध भर जाती है। औसत कद, स्वस्थ शरीर और छोटे घने घुंघराले बाल, सभी कुछ उसे असाधारण सुन्दरता प्रदान करते हैं। इन सबसे अलग उसके गौरवर्ण मुखड़े पर लावण्य की कोमल दीप्ति की अपेक्षा वर्ण का भाव परिलक्षित

होता है । वह मन को भाता है—दिल को अच्छा लगता है । उस
भीतर कुछ शब्द अपने आप मचल गये—"लाल गुलाब ... ला-
ल .. गुलाब .. ।"

अपनी ओर लगातार स्वरूप को देखते देख सन्तोष ने
जैसे आहत अभिमान से मुंह फेर लिया । तत्क्षण ही नीची
किये-किये उसने आहिस्ता से कहा—"अच्छा तो मैं चलती हूँ ...

न ठीक से मुलाकात ही हुई और न अच्छी तरह दीदार हु

परन्तु दूसरे दिन एक ऐसी अवांछित और अप्रिय घटना घ
हो गई,जिसने सब कुछ उलट कर रख दिया। इसके बाद किसी भी प्रक
की सद्भावना और सहृदयता की आशा करना व्यर्थ है । उसकी बेरु
ने बात करने की हिम्मत ही तोड़ दी । अलबत्ता हिकारत से भ
जलती नजरों का उसे पहले-पहल परिचय मिला । इसके बाद अभाव है
घनिष्ट सम्पर्क बढ़ाने की सम्पूर्ण चेष्टायें भी प्राय: नष्ट हो गईं ।

असल में बात यह हुई कि सन्तोष नहाकर बाथरूम से बाहर
निकल रही थी । उसके भीगे बदन पर झीली-ढाली धोती लिपटी हुई
थी । उसमे से अंगों का मनोहर उभार झांक रहा था । अकस्मात्
ही उधर से स्वरूप का निकलना हो गया । बस, उसकी दृष्टि अटक
गई । चिकने कपोल और स्वप्नो में तैरती आंखें उसे बड़ी विचित्र-सी
लगीं। बिखरे गीले बालों के नीचे चेहरे पर सौन्दर्य की ऐसी मनोखी और
अनुपम छवि चमक रही है, जिसके दर्शन स्वरूप ने आज प्रथम बार
किये हैं । कदाचित् ऐसे समय में ही एक अनजानी-सी आत्मीयता जन्म
लेती है, एक अज्ञात अनुराग का भाव ऐसी अस्त-व्यस्तता के कारण ही
उत्पन्न होता है ।

हटाना चाहकर भी वह अपनी दृष्टि उधर से हटा न पाया ।

दूसरी तरफ सन्तोष का गोरा मुखड़ा एक क्षण में गुस्से से
लाल हो गया । भला, वह इस प्रकार की बदतमीजी कैसे सहन कर
सकती थी। उसने घृणा मिश्रित व्यंग से कहा—' निर्लज्ज कहीं के...।"

और वह फुर्ति से अपने कमरे में चली गई।

स्वरूप को हठात् अन्दर ही अन्दर गहरी ठेस लगी। ऐसा ज्ञात हुआ, मानों बजते हुये सितार का तार अचानक टूट गया। नव-विकसित कली जैसी भावनाओं को किसी ने बेरहमी से मसल दिया। अपने प्रति किये गये तिरस्कार का स्पर्श था वह अपमान की वनस्पति से क्षुब्ध है, हतोत्साहित है, अशान्त है, निराश है!

जैसे-तैसे उसने इन्टरव्यू दिया। इसके पश्चात् वह घर लौटने की तैयारी करने लगा।

सुनते ही जीजी चकित रह गई। उन्होंने कहा—"इतनी जल्दी? अभी तो तेरे जीजाजी भी लौटकर नहीं आये। क्या उनसे मिलना जरूरी नहीं?"

इसके उत्तर में स्वरूप क्या कहता! गर्दन लटकाकर चुप हो जाने के अतिरिक्त उसके पास अन्य कोई विकल्प नहीं है।

"अभी तुम्हारा जाना नहीं होगा।"

यह बड़ी बहिन की आज्ञा है, जिसे टालने की हिम्मत उसमें कतई नहीं।

परन्तु जीजी यह बिल्कुल नहीं जानती कि उनके घर में ही उनके प्रिय भ्राता के दिल पर क्या बीत रही है? किसी की नजर भर देखना यहां असम्य अपराध है। भावनाओं की ऐसी कटु उपेक्षा न तो आज तक उसने कभी देखी है और न कभी सुनी है। उस दिन की वे अंगारों के सदृश्य जलती निगाहों को अभी तक स्वरूप भूला नहीं है, जिन्हें बड़ी मुश्किल से वह सीने पर झेल पाया था। इस प्रारम्भ-हीनता से भरे वातावरण में अब तो उसका दम घुटता है जी घबराता है।

आंधी आने की प्रबल सम्भावना को देखते हुये जिस प्रकार शतुर्मुर्ग रेत में गर्दन दबाकर आंखें बंद कर लेता है, उसी स्थिति में आज स्वरूप अच्छी तरह पहुँच गया है।

वैसे भी वास्तविकता को अस्वीकार करते हुये मानसिक स्तर

पर उत्तेजना को बनाये रखना बुद्धिमानी की निशानी नहीं है।
हीन ग्रन्थियें अक्सर ही तनाव-पूर्ण हो जाती है और वे भीतर ही
अनावश्यक कुण्ठाओं को जन्म देती हैं।

बस यूं ही कुर्सी में बैठा हुआ है स्वरूप, एक तरह से
और निढ़ाल। इस कमरे के परायेपन को अपने चारो ओर
उदास-सा, अप्रासंगिक-सा दरवाजे के बाहर आहट का आभास
ही वह एकाएक सतर्क हो जाता है सावधान हो जाता है।
इस समय उसे किसी की प्रतीक्षा नहीं है और न ही वह किसी
वाले के सम्बन्ध में कुछ सोच रहा है।

लेकिन इस अप्रत्याशित आहट ने उसके मन में किंचित प्रश्न
उत्पन्न कर दिया। उसके होंठ क्षण भर में एक खामोश और
हंसी में फैल गये।

अगले क्षण संतोष एक चाय की प्याली लेकर सशरीर उपस्थित
हो गई।

उसके नेत्र सहसा अविश्वास और आश्चर्य से कपाल पर
गये। सारी भ्रान्ति मिट गई। अन्दर ही अन्दर आशा के विपरीत
एक हलचल सी होने लगी। एक सुशील और सरल लड़की की मनोहर
तस्वीर उसकी कल्पना मे घूम गई। उसके मन में एक वाक्य मद-मद
ध्वनि करने लगा—"कभी-कभी ऐसा भी होता है ...।"

अपनी तरफ हैरानी से स्वरूप को देखते हुये संतोष किंचित
मुस्कराई। प्याली को मेज पर रखकर वह धीरे से बोली— "बैठ
जाऊं ... ?"

"जी, हां! बैठ जाइये ...।"—स्वरूप ने बहुत ही शराफत
से उत्तर दिया।

पास की कुर्सी को खिसकाकर वह उस पर इत्मीनान से बैठ
गई।

स्वरूप की समझ में कुछ भी नहीं आया। चित्र का दूसरा

यह भी अभी तक धुंधला है । वह चाय पीते-पीते सोच रहा है कि क्या वह यही लड़की है, जिसने पिछले दिन उसका अपमान किया था और वह आज भी उसकी दारुण यन्त्रणा भोग रहा है !

"आप चुप क्यों है ?" एकदम सीधी दृष्टि स्वरूप के चेहरे पर डालकर सन्तोष ने पूछा ।"

कमाल है ! आज यह चमत्कार कैसे हो गया ? कहीं वह जाग्रत अवस्था में स्वप्न तो नहीं देख रहा है ? फिर भी स्वरूप चुप रहा ।

"मैंने तो आपके बारे में सुना है कि आप बड़े हंसमुख और मिलनसार हैं, किन्तु मुझे आप ऐसे नहीं लगे ।"

अनजाने ही लड़की के कण्ठ में व्यंग प्रतिध्वनित हो उठा ।

अब स्वरूप तनिक सम्हल गया । कुछ तो व्यंग का प्रत्यक्ष रूप से प्रभाव पड़ा है और कुछ उसके पिछले दुर्व्यवहार को स्मरण करते-करते उसकी मुख-मुद्रा अत्यन्त कठोर हो गई । वह अपने स्वर को संयत करने के प्रयास में धीमे कण्ठ से बोला—"असल में आपसे बात करने की हिम्मत नहीं पड़ती ।"

"क्यों ?"

"डर लगता है ।"

"मुझ से ... ?"

वह हठात् खिलखिला पड़ी ।

"हंसिये मत ।"

अनचाहे स्वरूप के शब्दों में रुखी आ गई । शायद उसकी इस हंसी ने उसे एकदम उत्तेजित कर दिया ।

लड़की अचानक बुझ गई । लगा मानों किसी ने जलते हुये दीपक की बाती नीचे खींच दी हो । उसने अपनी बड़ी-बड़ी आंखों में मासूमियत और दहशत का भाव लेकर स्वरूप को निहारा ।

जाने क्यों, ये आंखें स्वरूप को भावनात्मक स्तर पर भी प्रभा-

वित नहीं कर सकी । आश्चर्य । इसके विपरीत वह ज्यों-ज्यों उस
गहराई में डूबता चला गया, त्यों त्यों एक अवांछित और अज्ञात डू
भाव उसके हृदय मे भरता चला गया । उस पर किसी का भी जैसे वश
नहीं ।

वह चोट करने की नियत से बोला—"भगवान ने ये मोटी-मोटी
आंखें सिर्फ बेरुखी और हिकारत से देखने के लिये नहीं बनाई हैं.. ।"

"क्या ... ?"

इतना भर सुनना था कि संतोष भक से जल उठी । पल भ
मे ही त्रस्त एव आशंका का वह भाव अदृश्य हो गया । तिलमिलाकर
उसने पूछा—"क्या किसी लड़की को घूरकर देखना शराफत है .. ?"

आवेश मे उसका समस्त गात थर-थर कांपने लगा । उसका
चेहरा तमतमा आया और उस पर घृणा एव तिरस्कार की रे
घनीभूत हो गई ।

स्वरूप इस भाव परिवर्तन से सहसा हतप्रभ रह गया । उ
एकाएक जवाब देते नहीं बना ।

इस निर्मम चुप्पी के कारण संतोष जहरीली नागिन की तर
बल खाने लगी । उसने फन ऊंचा किया और तेजी से फुंफकार उठ
"याद रखिये, जो आज घूरकर देखेगा, वो कल फब्तियां भी कसेगा
फिर वह परसों राह चलते छेड़खानी भी करेगा । क्या यह आवारागर्दी
और लफंगापन नहीं है ?"

दिमाग में खलबली मचाने वाला प्रश्न सुनकर स्वरूप कुछ देर
चुप रहा, फिर अपने आपको सुस्थिर करते हुये उसने उत्तर दिया—
"निश्चित रूप से । किन्तु ... कि . . न्तु ... ।"

इस 'किन्तु' पर आकर रुकने देख जरा नाराजगी में लड़की जोर
से बोली—"कहिये, आगे कहिये । रुक क्यों गये ?"

"...किन्तु प्रत्येक व्यक्ति के लिये आप ऐसा नहीं कह सकतीं ..

"क्यों नहीं कह सकती ?"

"इसलिये कि सुन्दर वस्तु को देखना कोई अपराध नहीं।"

"गलत। मैं नहीं मानती।"

सन्तोष की कण्ठ-ध्वनि प्रखर हो गई। इस बीच उसकी सुन्दर आंखों की जलती दृष्टि सूर्य तीर के समान स्वरूप के कलेजे के आर-पार निकल गई। इस पर वह विचलित नहीं हुआ।

कुछ पल ठहर कर वह पुन: कहने लगा—"मान लीजिये, आपके बालों की सुन्दर वेणी बनी है और उसमें मोगरे या चमेली की कलियों का गजरा शोभा पा रहा है, मगर उसकी तारीफ करते-करते कोई अपनी उंगलियों से उसे छू भी ले तो इसमें हर्ज क्या है ?"

"मैं . मैं ... इसके पहले ही ... ।"

"बस-बस, रहने दीजिये।"

लड़की को अत्यधिक उत्तेजित देख बीच मे बाधा देकर स्वरूप बोला—"यहीं आपके हृदय मे झूठे अभिमान का राक्षस घुस बैठा है। यह सच्चरित्रता और नैतिकता की डींग हांकता हुआ स्नेह के स्थान पर घृणा, प्रेम के स्थान पर सन्देह और सद्भावना के स्थान पर अविश्वास को जन्म देता है। अपने ही अहं के प्रभाव से निर्मित उलझन के चक्कर में आप बुरी तरह फंस गई है. याद रहे... ।"

कुर्सी के हत्थों को अपनी मुट्ठियों में कस कर दर्प-युक्त नेत्रों से आग उगलती हुई संतोष चिल्लाई—"अब आगे कुछ भी मत कहिये, वरना ... वरना ... ।"

वह रोष के अतिरेक मे थर-थर कांप रही है, यह स्वरूप ने भली-भांति देख लिया। फिर भी यह चेतावनी बिल्कुल बेअसर सिद्ध हुई। इस पर वह निश्चिन्त है निर्द्वंद्व है। इस धमकी के आगे निर्भय बनकर वह बोला - "जी नहीं। मैं आज अपनी बात कहकर रहूँगा, चाहे इस पर आप बुरा माने या नाराज होने की तकलीफ करें ... ।"

तनिक ठहरकर उसने कहना शुरू किया—"आप मे कुछ ऐसा है, जिसे लोग देखते हैं। निश्चय ही ये बड़ी-बड़ी आंखें बहुत सुन्दर

हैं । इन्हें किसी किस्म के काजल और सुरमे की जरूरत नहीं । हों
रसीले है, इन्हें भी किसी तरह की ललाई की अपेक्षा नहीं । यूं पू
पूरा चेहरा कमल के समान कमनीय है कोमल है, इसे मेकप की भी
आवश्यकता नहीं । इन बालो को देखिये । घुंघराले होने के कारण
छोटे-छोटे मालूम पड़ते है, किन्तु ऐसे संकोची है. जो फैलना नहीं चाहते
कधो पर उन्मुक्त भाव से लहराना नहीं चाहते । ... देखिये, मैं इन्हें
छूने जा रहा हूँ । अभी पता लग जायेगा कि इससे इनका सौन्दर्य कम
होता है या ... ।"

इतना सुनते ही मानों धीरज का बाध टूट गया । सतोष आग-बबूला हो गई । इस धृष्टता पर वह आग्नेय नेत्रों से एक पल मे ही ऱे स्वरूप को भस्म कर देगी, ऐसा ही ज्ञात हुआ ।

इससे पेश्तर वह कोई अनुचित हरकत कर बठता, सतोष कर खड़ी हो गई । स्वरूप के बढ़े हुये हाथ को रोकने के प्रयास उसका हाथ उठ गया ।

"बदतमीज ... बदमाश ... लोफर ... ।"

परन्तु इस बीच कांच की चूड़ियों से भरी नाजुक कलाई स्वरू की बलिष्ठ मुट्ठी में आ गई । धीरे-धीरे कसाव बढ़ता गया ।

"इतनी-सी बात पर इतना गुस्सा । अगर आप से मेरी शादी हो जाय तो अभी बगैर किसी तरह की आनाकानी के आप अपना सिर झुका लेंगी ... वाह खूब ! जिसे कभी चाहा नहीं, देखा नहीं, समझा नहीं, छूआ नहीं उसे पति के सारे अधिकार बेहिचक दे देंगी ! उसपर तन मन ही नहीं, बल्कि अपने क्वांरेपन की निशानी अस्मत भी लुटा देंगी । बाहरी आपकी शराफत ! हो सकता है कि वह आज तक आपके विचार से बदतमीज और बेशर्म भले हो रहा हो । उस पर अपना स्वप्नों से भरा प्यार न्योछावर कर देंगी ... !"

और उसने विद्रूप से भरा ठहाका लगाया ।

अपनी हंसी को रोक कर वह फिर कहने लगा —" पर यूं

उसने मुझे बुलाया

"मोहनी देवी !"

अचानक मैं चौंक पड़ती हूँ, जैसे अदालत के चपरासी ने [illegible]
पुकारा हो।

पास बैठी नौकरानी से मैंने पूछ लिया—"क्या पेशी के लि[illegible]
चपरासी ने मुझे अभी पुकारा है ?"

गहरी दृष्टि से देखकर नौकरानी ने मेरी उद्विग्नता को ता[illegible]
लिया, इस पर भी उसका कण्ठ स्वर संयत है—स्वाभाविक है।

"कब ?"

"अभी !"

"जी नहीं। वकील साहब कह गए हैं कि जब जरूरत होगी तो

मैं खुद बुलाने आजाऊंगा।"

"तो फिर मुझे .... ।"

मेरा स्वर बीच ही में टूट गया।

नौकरानी के होठों पर हल्की-सी हंसी की छाया नाच गई।

"आपको भ्रम हुआ है .... ।"

"भ्रम .... !"

नौकरानी के कथन ने मुझ पर गम्भीर प्रभाव डाला। इस समय जैसी अशांत यथा अस्थिर मनोदशा है उसमें प्रायः यह सम्भव है। इसे अप्रत्याशित एवं आकस्मिक भी नहीं कह सकते।

अदालत के बाहर बरामदे में मैं चुप-चुप-सी बैठी हूँ—एकदम उदास और मौन मुख, जैसे कोई जिज्ञासा न हो। अच्छी-खासी भीड़ है। पैशियां प्रारम्भ हो गई हैं जिज्ञासा।

भीड़ में कुछ परिचित चेहरे हैं, कुछ अपरिचित मुख! पास आकर वे यहां आने का कारण पूछते हैं। अन्य अस्पष्ट तथा रहस्यमय संकेतों द्वारा मेरी उपस्थिति के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त कर लेना चाहते हैं। इन सबकी दृष्टि व्यंगात्मक है दिल में शूल सी गड़-गड़ जाती है।

इधर से ध्यान हटाकर मैं अब अतर्मुखी हो गई हूँ। यह प्रतिक्रिया स्वाभाविक है—अनुकूल है। अतः सलिला में ज्वार की सम्भावना अत्यन्त तीव्र हो गई है, उसकी उद्दाम तरंगों पर नियन्त्रण रख पाना अत्यन्त दुष्कर है।

धीरे-धीरे अतीत का वह सारा घटना चक्र दुःस्वप्न की भांति मेरे मन-चक्षुओं के आगे घूम गया, जिसके अन्तराल में सुख-चैन सर्वथा नष्ट हो चुका है। इस चिंता-जनक घटना चक्र से प्रेरित, प्रभावित और पोषित मेरा सरल तथा सीधा जीवन आज सर्वग्रासी एवं सर्वनाशी भंवर-जाल में फंसकर रह गया है, जहां केवल जल समाधि लेने की दुराशा-मात्र ही प्रबल होती है। मुक्तिपथ की खोज की सम्भावना

यह पहली मुलाकात थी ।

"नमस्ते !"

दूसरी मुलाकात का प्रारम्भ शायद किसी शुभ घड़ी में नहीं [illegible]ा । इसके अतिरिक्त उस समय मेरी मन. स्थिति अनावश्यक रूप से [illegible]स्त व्यस्त भी हो सकती है। जाने कैसे मैंने उसके अभिवादन की [illegible]र्मम उपेक्षा कर दी ।

उसने इसे लक्ष्य किया। उसका सारा उत्साह एकदम बुझ गया। [illegible]ह विषण्ण मुख लटकाये-लटकाये चुपचाप लौट गया ।

लेकिन यह क्या ? मैं चाहकर भी सुस्थिर नहीं रह सकी । एक [illegible]चित्र प्रकार की बेचैनी से मैं आहत हूँ—उद्विग्न हूँ। हृदय में चुपके से [illegible]ोई कह जाता है—तेरा व्यवहार भद्रता के अनुकूल नहीं है, विवेक—[illegible]म्मत भी नहीं कह सकते । स्त्री-सुलभ तो है ही नहीं । इस उपेक्षा [illegible]तेरे अह की परितुष्टि मात्र है, जो सर्वथा अनपत है—अविवेक पूर्ण [illegible]...... अब ?

कुछ दिनों के बाद अचानक उससे एक और भेंट हो गई । वह [illegible]ड़क पर से जा रहा था और मैं नीचे के कमरे में खड़ी-खड़ी खिड़की [illegible] से बाहर का दृश्य देख रही थी ।

वह रुक गया । उसने सहमी सहमी सी दृष्टि से मेरी ओर [illegible]का । हालांकि कुछ अवश-सी झिझक और न सह सकने वाली लज्जा [illegible]समें अभी तक शेष है, जो शायद मेरे व्यवहार के परिणाम-स्वरूप [illegible]त्पन्न हो गई है ।

पता नहीं, किस आकस्मिक विचार तरंग, अप्रत्याशित मानसिक [illegible]एं वेग अथवा हृदय की किस उल्लसित भावना से प्रेरित हो मैं एकदम [illegible]खिल उठी । बस मेरे अधरों पर सहसा हृदयग्राही मुस्कान नाच उठी।

अब उसमें अद्भुत परिवर्तन हो गया । उसकी वह मन्थनरूक [illegible]भाव भंगिमा और सहमी-सहमी-सी मुख-मुद्रा एकाएक हास्य पूर्ण और मधुर हो गई । उसके होंठों की मुस्कान इतनी प्यारी, इतनी मोहक

और इतनी मुखर कि किसी भी व्यक्ति का हृदय क्षण भर मुग्ध हो सकता है, रीझ सकता है ।

"ओह !"

बस, इसके पश्चात मनमाने में मनचाहे ऐसा प्रश्न बना कि हम दोनों उसके जाल में उलझते चले गये । वह आता है और देखे हम मोहक मुस्कान के साथ देखता रहता है । प्रतिक्रिया-स्वरूप मैं परिणाम से अनभिज्ञ होकर हल्की-सी हंसी अथवा मन्द-मन्द मुस्कान से उसका स्वागत करती हूँ । संकोच अथवा झिझक का कोई भी अंश धीरे-धीरे मेरी चेतना से विलुप्त होता गया । फिर लज्जा का छोटा सा कण भी अवचेतन मन से क्रमशः समूल नष्ट हो गया । मैं इसे अत्यन्त साधारण व्यवहार समझ बैठी हूँ, मगर इसने जिस दुर्भाग्य पूर्ण परिस्थिति और हृदय हीन वातावरण की सृष्टि की है, उसकी सहज ही मैं कल्पना नहीं की जा सकती ।

और मैं उस दिन अचानक चीख पड़ती हूँ ।

इस विडम्बनापूर्ण स्थिति अथवा संकटापन्न अवस्था में पड़ कर किसी का भी धैर्य और साहस आतंकित एवं भयभीत हो उठता है । इस पर मैं तो एक स्त्री हूँ प्रतिरोध-शून्य, जो सहायक के अभाव में चीखने-चिल्लाने के अतिरिक्त कुछ कर ही नहीं सकती ।

पता नहीं कैसे उसने अपना बौद्धिक एवं मानसिक संतुलन खो दिया । बिखरे बाल, अस्त-व्यस्त कपड़े, और लाल-लाल आँखें । विकृत मुखाकृति से प्रकट हो रहा है कि वह कई रातों से सोया नहीं है । कोई बात है, जो शूल के समान उसके दिल में गड़ रही है । उसे लेकर ही वह परेशान एवं अशान्त है । उसका सूखा चेहरा और क्रूर भाव प्रच्छन्न रूप से इस मान्यता की पुष्टि करते हैं ।

अपने सहज-स्वभाव के निर्देशानुसार मैं मुस्करा कर उसके आगमन का मौन अभिनन्दन करती हूँ, मगर इसके विपरीत उसका उत्तर...

उफ़...... !

एक क्षण का विलम्ब किये बिना ही वह अकस्मात् आवेश में उछला और खिड़की में से कूद कर मेरे कमरे में आ धमका। मैं एक तरह से स्तंभित रहकर इस नई स्थिति को समझने की ठीक-ठीक कोशिश करूँ, इससे पहले ही उसने मुझे अपने मजबूत आलिंगन-पाश में कस लिया।

"मेरी हृदयेश्वरी! अब मैं अधिक प्रतीक्षा नहीं ...... कर सकता — नहीं ... कर सकता ... । तुम मेरी ... हो ... ।"

मैं एक भयातुर चीख के बाद आप ही आप अचेत हो जाती हूँ।

मेरे मूर्छित हो जाने के कारण उस घटना ने एक नया रूप ले लिया। कदाचित नौकरानी ने मेरी चीख सुन ली थी और कमरे में पहुँचकर उसने भयभीत कण्ठ से शोर मचा दिया था। बात की बात में मोहल्ले के कई व्यक्ति एकत्रित हो गए। उन्हें बात समझते देर न लगी। तैश में आकर "मजनूं साहब" की अच्छी पूजा करने लगे। उन्हें पूछने वाला कौन है! उनकी क्रोधोत्तेजक वाणी और रोष पूर्ण मुद्रा को रोकने की सामर्थ्य भी अब किस में है।

तब वह भी मार खाते-खाते बेहोश हो गया। प्रतिरोध का तो प्रश्न ही नहीं उठता! वह एक अकेला और पीटने वाले इतने सारे लोग?

उस पर बलात्कार करने के प्रयास का आरोप लगा कर मामला अदालत में चला जायेगा, यह प्रायः निश्चित है। कई दफा भीड़ में संयोग से कचहरी के आदमी भी मिल जाते हैं; जो अपराधी को अक्सर कटघरे तक खींच कर ले जाते हैं। दुःख तो इस बात का है कि उसने मेरी प्रतिष्ठा को धूल में मिला दिया। मेरी नैतिकता और चारित्रिक पवित्रता को कलंकित करके मेरे नारीत्व के प्रति उसकी धृष्टता ने असहनीय संदेह उत्पन्न कर दिया। मैं किसी को मुंह दिखाने योग्य नहीं रही। आज मेरी मर्यादा सर्वथा हास्यास्पद है — संदिग्ध है। खेद के साथ कहना पड़ता है कि जहां उसके साथ मैंने सद्भावनाओं से

य मौन हंसी, जिस पर पहली ही झलक में मैं मुग्ध हो गई थी—एक
रद्द से जुट गई थी ।

"ओह् ।"

अतिशय घबराहट मे मेरे बदन पर पसीना सा छूट आया ।

वकील का फिर स्वर सुनाई पड़ा — 'मोहनी देवी । आप पढ़ी-
लो हैं, समझदार हैं । आपकी यह चुप्पी ठीक नहीं । कहीं यह किसी
दे आदमी के जीवन से खिलवाड़ न कर बैठे, विशेष रूप से इसका
आपको ध्यान रखना है ।"

इसका मुझ पर अनुकूल प्रभाव पड़ा । ये शब्द मर्मस्पर्शी हैं,
गर भावोद्रेक मे मेरी जीभ तालु से चिपक गई ।

'आप इन्हें पहचानती हैं ?"

वकील का प्रश्न विचित्र सा ध्वनित हुआ । कम से कम मुझे
तो ऐसा ही अनुभव हुआ । मैंने गर्दन उठा कर धीरे से उनके सकेत
की दिशा में ताका तो वही मोहक मौन हंसी और प्यारी-प्यारी सी
मोहनी मुस्कान । उफ ... ।

मेरे उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही उनका दूसरा प्रश्न है —
अपराधी पर बलात्कार के प्रयास का घृणित आरोप है । लेकिन वह
बार-बार कहता है कि उसने मुझे बुलाया था, याने आपने उसे बुलाया
था । क्या यह सच है ?"

सुनकर सारी अदालत मे सन्नाटाछा गया । लगता है जैसे
सभी लोग केवल इस प्रश्न का उत्तर सुनने के लिये ही आतुर हैं । अब
तो उनकी उत्सुक दृष्टि सिर्फ मेरे ऊपर कुण्डली मार कर बैठ गई है ।

"झूठ, बिल्कुल झूठ !—मैं आपाद-मस्तक तड़प उठी । मेरी
एक ना' उसे जेल की कोठरी मे बंद कर सकती है । उसको बर्बरता
की सजा दिला सकती है ।

परन्तु दूसरे ही क्षण मैं धक-सी रह गई । आशा के विपरीत
यह प्रभाव उस दूसरी मोहनी का है, जो मेरे अन्तस में से झांक कर मुझे

शब्दों का विष

•

•

नरोत्तम को बिदा करके जब मिसेज बंसल लौटी तो अत्यन्त उदास और थकी हुई थी। वह कटे वृक्ष की तरह शिथिल होकर सोफे पर गिर पड़ी मगर लज्जा, ग्लानि तथा अन्तर्ज्वाला से मुक्ति नहीं पा सकी। यह बात किसी भी प्रकार भुलाई नहीं जा सकती कि पति की निष्ठुर वाणी और शंकित दृष्टि नरोत्तम और उसके सम्बन्धों को लेकर अविश्वास एवं अश्रद्धा प्रकट करती है, जो किसी भी स्थिति में सहनीय नहीं है।

अभी, थोड़ी-सी देर पहले, पति से उसकी अप्रिय झड़प हो चुकी है।

"मेरे मित्रों का इस प्रकार अपमान और तिरस्कार करने का

प्रोफेसर को एक धक्का लगा। वे भली भांति जानते हैं कि इस अस्पष्ट अभियोग की तह में केवल क्षोभ, प्रतिहिंसा तथा दुर्भावना के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है, जो आगे चल कर अविच्छिन्न अशान्ति का जनक है।

"यह झूठ है।"– प्रोफेसर बंसल उत्तेजना-वश कहने लगे—"अपने आपको निर्दोष और निष्कलंक सिद्ध करने के लिए मेरे ऊपर तुम दुश्चरित्र होने का मिथ्या आरोप गलत रही हो—यह ठीक नहीं।"

"क्या ठीक है – क्या गलत है, यह तो तुम्हारा दिल ही जानता है। अब मेरे मुंह से सुनकर क्या करोगे ?"

"तुम चाहे कितना ही सतीत्व का ढोंग रचो, वास्तव मे...।" प्रोफेसर बसल जैसे गरजे।

"क्या बोले ऽऽ ?"

कृष्णा की दोनों आंखों से हठात् विद्युत-शिखा-सी निकल पड़ी।

"मैं तो अब अदालत मे ही जाकर बोलूंगा।"— अपना बौद्धिक और मानसिक सन्तुलन खोकर प्रोफेसर चीख पड़े—"मेरे पास प्रमाण है, जिसके आधार पर मैं तुम्हें तलाक . ।"

"हां-हां, दे दीजिए तलाक।"—कृष्णा का क्रोध भी बरसाती नदी की तरह उमड़ पड़ा, जो कूल-किनारों की मर्यादा का शीघ्र ही उल्लंघन कर जाता है—"मेरे पास भी आपके विरुद्ध पर्याप्त प्रमाण हैं याद रहे अदालत भी आखें बन्द करके फैसला नहीं करेगी ...।"

"देखा जायगा ...।"

इस सिंह-गर्जना के पश्चात् प्रोफेसर बसल पैर पटकते हुए अपने कमरे की तरफ चल दिये।

तनाव की यह स्थिति कई दिनो से बराबर चली आ रही है।

से रो रही है...... । यह...... यह ...... कैसे सम्भव हो गया है... सर...... ?"

इस प्रश्न के साथ ही जैसे उसका हृदय चीत्कार कर उठा । दोनों पत्रों को देखकर प्रोफ़ेसर बंसल हठात् गम्भीर हो गये ।

संध्याकालीन छाया जैसे ही घनी हुई, पार्टी में सतरंगी बहार छा गई । कहीं हंसी की जल तरंग—कहीं होठों पर कटीली मुस्कान की खिलती कलियां । चारों ओर परस्पर हास-परिहास की मधुर मन्दाकिनी का तीव्र प्रवाह ।

आज प्रोफ़ेसर बंसल ने अपनी कक्षा में पढ़ने वाले छात्र-छात्राओं के एक दल को इस पार्टी में विशेष रूप से आमन्त्रित किया है । एक कोने में उनकी पत्नी कृष्णा भी गुम-सुम बैठी है । लगता है, प्रोफ़ेसर बंसल उसे बड़ी कठिनाई से मनाकर लाये हैं । शायद अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाकर उन्होंने सारी स्थिति पत्नी के समक्ष स्पष्ट की होगी, तब कहीं थोड़ी देर के लिये पति पर एक प्रकार का कृतज्ञता का बोझ लादकर कृष्णा ने पार्टी में सम्मिलित होने का निमंत्रण स्वीकार किया होगा । अभी तक वह मानभरी, अभिमान-भरी चुपचाप एक तरफ़ बैठी है । नरोत्तम भी इन सबसे अलग थोड़ा दूर हटकर उदास और मौन है । कभी हंसने अथवा बोलने का कोई प्रसंग आता है तो निर्जीव-सी फीकी हंसी प्रत्युत्तर में हंस भर देता है बस ।

खान-पान के पश्चात् प्रोफ़ेसर बंसल उठे । उन्होंने हंस कर विद्यार्थियों के समक्ष एक प्रस्ताव रखा—"मैं आप सबको बोल कर एक पत्र लिखवाता हूँ । आशा है, आप सुन्दर शब्दों और वाक्यों के द्वारा उसे लिखने का प्रयत्न करें, परन्तु ध्यान रहे—उस सुलेख पर एक विशेष पारितोषिक भी मिलेगा ... ।

पति-पत्नी में एक प्रकार से बोल-चाल बन्द है। प्रायः अपने-अपने कमरों में दोनों एक-दूसरे के प्रति अजनबी से बनकर बैठे रहते। यदि संयोग से, कभी एक-दूसरे के सामने आ गये तो अगले क्षण ही घृणा एवं रोष से कतरा कर निकल जाते हैं मानों दोनों परस्पर चिर काल से वैरी हैं, शत्रु हैं। यह शत्रुवत् व्यवहार और दूरत्व की यह परिधि दिन-प्रति-दिन अनावश्यक रूप से विस्तार ले रही है। इस दुर्भाग्यपूर्ण विडम्बना का अन्त निकट भविष्य में तो दिखाई नहीं पड़ता।

अचानक एक सुबह नरोत्तम ने प्रोफेसर बंसल के कमरे में एक आंधी के झोंके के समान प्रवेश किया और उन्हें आश्चर्यचकित कर दिया।

"क्या बात है नरोत्तम ?"

बिखरे बाल, अनिद्रा से क्लान्तकातर आंखें, मलिन मुख-मण्डल! किसी अप्रत्याशित दुःख अथवा किसी आकस्मिक आघात के फल-स्वरूप वह भीतर ही भीतर घुट रहा है। अन्तर्व्यथा में सुलग रहा है।

उसके प्रति वितृष्णा एवं आक्रोश का पूर्वभाव त्यागकर, प्रोफेसर बंसल दंग रह गये। तब वे पुनः पूछ बैठे—"क्या बात है ?"

"सर ... सर ...। देखिये यह दो पत्र। एक आप द्वारा लिखा हुआ मेरी बहन चंचल के नाम और दूसरा कृष्णा जी का ... नाम।"

"क्या ?"

सहसा अवाक् मुख पर सीप-सी आंखें खड़ी रह गईं।

अब नरोत्तम की आंखों में मार्मिक पीड़ा झलक आई। वह सम्वेदन शील कण्ठ से बोला—"...और ... और चंचल तो एक प्रकार से अन्न-जल का त्याग करके भूखी-प्यासी अपने कमरे में बन्द है। इस पत्र को पढ़ कर सर्व-प्रथम वह स्तब्ध रह गई, फिर उसका भावार्थ समझ कर आपाद-मस्तक कांप उठी। वह निर्दोष ...

से रो रही है...... । यह...... यह ...... कैसे सम्भव हो गया है...
सर...... ?"

इस प्रश्न के साथ ही जैसे उसका हृदय चीत्कार कर उठा ।

दोनों पत्रों को देखकर प्रोफेसर बंसल हठात् गम्भीर हो गये ।

संध्याकालीन छाया जैसे ही घनी हुई, पार्टी में सतरंगी बहार छा गई। कहीं हंसी की जल तरंग—कहीं होठों पर कटीली मुस्कान की खिलती कलियाँ। चारों ओर परस्पर हास-परिहास की मधुर मन्दाकिनी का तीव्र प्रवाह ।

आज प्रोफेसर बंसल ने अपनी कक्षा में पढ़ने वाले छात्र-छात्राओं के एक दल को इस पार्टी में विशेष रूप से आमन्त्रित किया है । एक कोने में उनकी पत्नी कृष्णा भी गुम-सुम बैठी है । लगता है, प्रोफेसर बंसल उसे बड़ी कठिनाई से मनाकर लाये हैं । शायद अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाकर उन्होंने सारी स्थिति पत्नी के समक्ष स्पष्ट की होगी, तब कहीं थोड़ी देर के लिये पति पर एक प्रकार का कृतज्ञता का बोझ लादकर कृष्णा ने पार्टी में सम्मिलित होने का निमंत्रण स्वीकार किया होगा । अभी तक वह मानभरी, अभिमान-भरी चुपचाप एक तरफ बैठी है । नरोत्तम भी इन सबसे अलग थोड़ा दूर हटकर उदास और मौन है । कभी हंसने अथवा बोलने का कोई प्रसंग आता है तो निर्जीव-सी फीकी हंसी प्रत्युत्तर में हंस भर देता है बस ।

खान-पान के पश्चात् प्रोफेसर बंसल उठे। उन्होंने हंस कर विद्यार्थियों के समक्ष एक प्रस्ताव रखा—"मैं आप सबको बोल कर एक पत्र लिखवाता हूं । आशा है, आप सुन्दर शब्दों और वाक्यों के द्वारा उसे लिखने का प्रयत्न करें, परन्तु ध्यान रहे—उस सुलेख पर एक विशेष पारितोषिक भी मिलेगा ... ।

पति-पत्नी में एक प्रकार से बोल-चाल बन्द है। प्रायः अपने-अपने कमरों में दोनों एक-दूसरे के प्रति अजनबी से बनकर बैठे रहते। यदि संयोग से, कभी एक-दूसरे के सामने आ गये तो अपने रूख हैं घृणा एवं रोष से भरकर निकल जाते हैं मानों दोनों एक चिरकाल से बैरी हैं, शत्रु हैं। यह अद्भुत व्यवहार और दुःख यह परिधि दिन-प्रति-दिन अनावश्यक रूप से विस्तार ले रही है। इस दुर्भाग्यपूर्ण विडम्बना का अन्त निकट भविष्य में तो दिखाई नहीं पड़ता।

अचानक एक युवक नरोत्तम ने प्रोफेसर बसल के कमरे में एक आंधी के झोंके के समान प्रवेश किया और उन्हें आश्चर्यचकित कर दिया।

"क्या बात है नरोत्तम ?"

बिखरे बाल, अनिद्रा से क्लान्तकातर आंखें, मलिन मुख-मण्डल! किसी अप्रत्याशित दुःख अथवा किसी आकस्मिक आघात के फलस्वरूप वह भीतर ही भीतर घुट रहा है। अन्तर्व्यथा में सुलग रहा है।

उसके प्रति वितृष्णा एवं आक्रोश का पूर्व भाव त्यागकर, प्रोफेसर बसल दंग रह गये। तब वे पुनः पूछ बैठे—"क्या बात है ?"

"सर ... सर ...। देखिये यह दो पत्र। एक आप द्वारा लिखा हुआ मेरी बहन चचल के नाम और दूसरा कृष्णा जी का मेरे नाम।"

"क्या ?"

सहसा अवाक् मुख पर सीप-सी आखें जड़ी रह गईं।

अब नरोत्तम की आखों में मार्मिक पीड़ा झलक आई। वह सम्वेदन शील कण्ठ से बोला—"...और ... और चचल तो एक प्रकार से अन्न-जल का त्याग करके भूखी-प्यासी अपने कमरे में बन्द है। इस पत्र को पढ़ कर सर्व-प्रथम वह स्तब्ध रह गई, फिर उसका भावार्थ समझ कर आपाद-मस्तक कांप उठी। वह निर्दोष भोली [illegible] भी

से रो रही है...... । यह...... यह ...... कैसे सम्भव हो गया है... सर...... ?"

इस प्रश्न के साथ ही जैसे उसका हृदय चीत्कार कर उठा । दोनों पत्रों को देखकर प्रोफेसर बंसल हठात् गम्भीर हो गये ।

संध्याकालीन छाया जैसे ही घनी हुई, पार्टी में सतरंगी बहार छा गई । कहीं हसी की जल तरंग—कहीं होठों पर कटीली मुस्कान की खिलती कलियां । चारों ओर परस्पर हास-परिहास की मधुर मन्दाकिनी का तीव्र प्रवाह ।

आज प्रोफेसर बंसल ने अपनी कक्षा में पढ़ने वाले छात्र-छात्राओं के एक दल को इस पार्टी में विशेष रूप से आमन्त्रित किया है । एक कोने में उनकी पत्नी कृष्णा भी गुम-सुम बैठी है । लगता है, प्रोफेसर बंसल उसे बड़ी कठिनाई से मनाकर लाये हैं । शायद अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाकर उन्होंने सारी स्थिति पत्नी के समक्ष स्पष्ट की होगी, तब कहीं थोड़ी देर के लिये पति पर एक प्रकार का कृतज्ञता का बोझ लादकर कृष्णा ने पार्टी में सम्मिलित होने का निमंत्रण स्वीकार किया होगा । अभी तक वह मानभरी, अभिमान-भरी चुपचाप एक तरफ बैठी है । नरोत्तम भी इन सबसे अलग थोड़ा दूर हटकर उदास और मौन है । कभी हंसने अथवा बोलने का कोई प्रसंग आता है तो निर्जीव-सी फीकी हंसी प्रत्युत्तर में हंस भर देता है बस ।

खान-पान के पश्चात् प्रोफेसर बंसल उठे। उन्होंने हंस कर विद्यार्थियों के समक्ष एक प्रस्ताव रखा—"मैं आप सबको बोल कर एक पत्र लिखवाता हूँ । आशा है, आप सुन्दर शब्दों और वाक्यों के द्वारा उसे लिखने का प्रयत्न करें, परन्तु ध्यान रहे—उस सुलेख पर एक विशेष पारितोषिक भी मिलेगा ... ।

“क्या !” पूछकर सभी छात्र व छात्राएँ ... प्यार पत्र के साथ यह एक मेजर का कैसा कॉम्बिनेशन !”

सभी इसके बाद एक हास्य-उत्साहित होकर बड़े आन-मई ! यह भी एक केस है । देखें, कहाँ और कैसा है !”

“हाँ !”—सबके सम्मिलित स्वर में स्वीकृति उभर पड़ी ।

प्रोफेसर साहब लिफाफा-खत से धीरे-धीरे पत्र को बोलने लगे ।

“प्रियतमा मेरी ... !”

कई चौंका एक साथ चौंक पड़े । उनकी आँखों में एक प्रश्न उभरा ।

“क्या ?”

प्रोफेसर के होंठों पर एक हल्की-सी मुस्कान तैर गई ।

“चौंकिये मत । मैं स्पष्ट बता दूँ कि यह एक प्रेम-पत्र है इसमें एक विरही प्रेमी की अन्तरंग भावनाएँ ही प्रतिबिम्बित हो रही हैं ... ।”

सबने विस्मय से एक—दूसरे की ओर देखा, बाद में एक मीठी-सी हँसी हँसकर पत्र लिखने के लिये सभी तैयार हो गये ।

प्रोफेसर ने पुनः आरम्भ किया—

“... प्रयत्न करने पर भी मैं पिछली रात बिल्कुल सो न सका। तुम पूछोगी—क्यों ? जान मेरी, बार-बार मुझे होटल की वह रंगीन और मतवाली रात स्मरण हो आई, जब तुम उस यौवनपूर्ण एवं रंगीले वातावरण में डूबकर बड़ी हँस-मुख, चुलबुली और प्रणय आतुर बन गई थी । आह ! तुम्हारा वह बड़े नखरे से 'हैं ... हैं ... हैं ...' करना और इसके साथ मुझे तरसा-तरसा कर सताना ... । सचमुच तुम्हारी यह अदा मेरे मन को इतनी भा गई कि इस समय भी कलेजा मसोस-मसोस उठता है ... ।

“... तृष्णा ! तुम वास्तव में मेरे विकल मन की तृष्णा हो ।

अकेले में अपने जलते होंठों को तर करके मैं विचित्र प्रकार का रोमांच-सा अनुभव करता हूँ, जिन पर तुम्हारे अधरों के गर्म-गर्म स्पर्श ... ।"

"यह झूठ है—यह बकवास है ।"—मिसेज बसल की आंख में जैसे रोष की अग्नि भड़क उठी—"तुम्हें मेरा अपमान करने का कोई अधिकार नहीं है ।"

"अपमान !"—प्रोफेसर के होंठों पर तिलिस्म-सी हंसी फैल गई—"भई, कमाल है । मैं तो एक साधारण प्रेम-पत्र . ।"

"प्रेम-पत्र .. ?"

कृष्णा ने दांत पीसे । विवेक-शून्य-सी होकर वह पति की ओर भूखी बाघिन के समान झपटी ।

शायद उनके लक्ष्य को अतिथि अच्छी तरह समझ गये । वे सब एक दल बनाकर पति-पत्नी के बीच में खड़े हो गये ।

"ठहरो !"

ठीक इसी समय प्रोफेसर बसल धीर-गम्भीर स्वर में बोले । इसके साथ उनकी दृष्टि उस विद्यार्थी पर केन्द्रित हो गई, जो अब तक मेज पर गर्दन झुकाए चुपचाप बैठा है ।

प्रोफेसर उसके समीप आये । उससे पत्र छीनकर पढ़ने लगे । फिर अपनी जेब से पत्रों का बण्डल निकालकर वे एक-एक पत्र की लिखावट उससे मिलाने लगे ।

"क्या बात है सर ?"—सब विस्मित रहकर पूछ बैठे।

प्रोफेसर बसल के चेहरे पर रहस्य की छाया घनी हो गई ।

"अभी ज्ञात हो जाता है ... ।"

अभी उन्होंने बैठे हुए विद्यार्थी को सम्बोधित करके कहा—"तो सखा, तुम थे, जो सबके नाम से अलग-अलग प्रेम-पत्र लिखा करते थे । इनमें से अधिकांश पत्रों की भाषा तथा शैली इतनी अश्लील, इतनी अभद्र है कि कोई भी सम्भ्रान्त व्यक्ति उन्हें पढ़ने का साहस नहीं कर ।"

उन्हें एकत्रित भी करते हैं । संयोग की बात, एक दिन कुछ पुस्तकें मेरे हाथ लग गई । उनमे नग्न तस्वीरें के अतिरिक्त कामुक कथाएं भी सकलित हैं, जिन्हें पढ़कर प्रथम बार मुझे रोमान्च सा हुआ ... ।"

" ..उन्हीं पुस्तकों में इस प्रकार के प्रेम-पत्र पढने को मुझे मिले । अचानक मेरे मन मे एक विचार उत्पन्न हुआ—क्यों न इन पत्रों को अलग-अलग नाम से अलग-अलग व्यक्तियों को लिखे जाय ?

" . तब मेरे आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा, जब इन पत्रों का मैंने आशा के विपरीत और कल्पनातीत प्रभाव होते देखा । सर ! जब आप दोनों पति-पत्नी को मैंने छिपकर लड़ते देखा था तो सचमुच एक विचित्र आनन्द की अनुभूति से मेरा मन-मयूर नाच उठा था। चपल और नरोत्तम को मैं तड़पते देखता था तो मेरा हृदय अपूर्व सुख के अनुभव से उछलने लगता । कभी-कभी तो मैं एक निर्मम हसी भी हस देता । ...बस, इसी आनन्दानुभूति और मानसिक तृप्ति के लिए ही मैं यह सब-कुछ अपराध आज तक करता रहा ।"

और इसके साथ सन्ना पश्चाताप की अन्तर्ज्वाला में धुंधुं करके जलने लगा, जिसकी प्रतिच्छाया उसके विवर्ण मुख पर स्पष्ट रूप से झलक रही थी ।

" . मुझे क्या पता था कि मैं अनजाने मे कैसा दुष्ट-कार्य कर रहा हूँ । ...किसी की हरी-भरी गृहस्थी मे आग लगा रहा हूँ ... किसी के मन की शान्ति भग कर रहा हूँ । अब इस अपराध के लिए आप चाहे तो मुझे पुलिस के हवाले करदें—अथवा आप सब लोग मिलकर मुझे इतना पीटें ...इतना पीटें कि ... ।"

इतना कहकर सन्ना ने असीम ग्लानि और दुःख के अतिरेक मे अपना मुंह दोनों हाथों से ढक लिया और मार्मिक स्वर में वह अचानक सिसक उठा ।

"यह कैसी आनन्दानुभूति ।"

"यह कैसी मानसिक-तृप्ति ?"

" सबके होंठों पर केवल एक ही प्रश्न चिन्ह है ।

बरसते पानी का संगीत

•

•

उस दिन सहसा क्षितिज के एक कोने में काले मेघ के एक छोटे से टुकड़े का आविर्भाव हुआ और देखते-देखते सारे नीलाम्बर को वह आच्छादित कर गया। मन्द-मन्द गति से बहती हवा अत्यन्त तीव्र हो गई। उसमें आंधी का सा वेग आ गया। वर्षा की भीनी-भीनी गंध भी आने लगी। दूर—बहुत दूर—आकाश के काले हृदय को विदीर्ण करके सौदामिनी भी तड़प-तड़प जाती है।

यातायात प्रायः ठप्प हो जाता है। आवागमन एक तरह से रुक जाता है। इस बीच भगदड़-सी मच गई। लोग-बाग इधर-उधर भागने लगे। यदि तनिक भी विलम्ब किया गया, तो वर्षा की मोटी-मोटी बूंदों से सबका अच्छा स्वागत होगा। यही सोचकर सभी सुरक्षित

गौर निरापद स्थान की खोज में दौड़ पड़े—खासतौर से पैदल चलने वाले।

और तो और दूकानदारों के भीतर भी घबराहट सी फैल रही है। वे भी शीघ्रता में दूकानें बंद करने के पक्ष में हो गये हैं।

हवा का वेग क्रमशः तेज होता गया। तीव्र लहरें सन-सनाती हुई आईं। पैदल चलने वाले राज के कान, नाक, आंखें और मुंह में मिट्टी भर गई। एक लहमे में ही वह आपाद-मस्तक धूल-फूस से धूसरित हो गया। आश्चर्य तो यह है कि उसके हाथ में तना हुआ छाता भी उसकी रक्षा नहीं कर सका। वह तो हवा के पहले झोंके में ही उड़ने लगा। पूरी ताकत लगा कर वह उसे सम्हाले हुए है।

तभी वर्षा की पहली बौछार मटमैले आसमान से बरस पड़ी। परेशान होकर राज फुर्ति से भागा और फुटपाथ के बीच में खड़े नीम के पेड़ के नीचे आ गया। उसने सोचा—थोड़ी ही देर में वर्षा और धूल का पातक पूरी तरह समाप्त हो जायेगा, तब वह आराम से चल देगा।

आशा के विपरित स्थिति निरन्तर बिगड़ती जा रही है। इस उल्टे मौसम की बारिश के कम होने के कोई लक्षण दिखाई नहीं पड़ता। नन्हे-नन्हे जल-सीकरों के स्थान पर मोटी-मोटी बूंदें धराधोप आकाश से टपकने लगी हैं। दुर्भाग्य से वह पेड़ भी मानों प्रकृति के इस कोप में सम्मिलित होकर झूम-झूम कर अपने सहस्र पत्तों से जल बरसाने लगा है।

अब ?

राज की धुंधली-धुंधली दृष्टि में स्वाभाविक रूप से यह प्रश्न उभर आया। वह ठीक से कुछ निर्णय नहीं कर सका। छाते को मज-बूत मुट्ठी में कसकर पकड़े-पकड़े ही अधैर्य से वह खड़ा रहा।

काफी तेज बारिश है। दूरतक सड़क सुनसान हो गई है। एक छोर पर मरियल सा कुत्ता आता दिखाई दिया, लेकिन जल्दी से

बरसते पानी का संग

उस दिन सहसा क्षितिज के एक कोने में काले मेघ के एक
से टुकड़े का आविर्भाव हुआ और देखते-देखते सारे
आच्छादित कर गया। मन्द-मन्द गति से बहती
गई। उसमें आंधी का सा वेग आ गया। वर्षा
भी आने लगी। दूर—बहुत दूर—आकाश
करके सौदामिनी भी तड़प-तड़प जाती है।

यातायात प्रायः ठप्प हो जाता है।
जाता है। इस बीच भगदड़-सी मच
भागने लगे। यदि तनिक भी विलम्ब
मोटी बूंदों से सबका अच्छा स्वागत है

भी उसकी मासूम आखें डरी - सहमी सी हैं । बार बार सहायता की याचना करती-सी वे राज की तरफ अपने आप उठ जाती हैं । उसकी मूक वाणी अत्यन्त मर्म-स्पर्शी है हृदय-द्रावक है ।

वास्तव मे राज का उधर ध्यान ही नहीं है । उसकी दृष्टि तरुणी की भीगी साड़ी पर केन्द्रित है, जो बदन से बुरी तरह चिपक गई है । उसमें से अंगों का मनोहर उभार झांक रहा है । वैसे वह स्वस्थ और सुन्दर है । हिरनी जैसी बड़ी-बड़ी आखें उसके गोरे मुखड़े पर बहुत अच्छी लगती हैं । उसके तीखे नाक-नक्श और तराशी हुई आकृति को देखकर उसके मन में किसी पुरानी कलाकृति की याद ताजा हो जाती है, जो तस्वीर में इसी तरह भीग रही थी ।

हटाना चाहकर भी वह अपनी निगाहें हटा नहीं पाया ।

"कहीं इन आंखों को रूप की भूख तो नहीं लग गई ?"— आशंका और अविश्वास से राज सहसा विचलित हो गया—' फिर ये चकाचौंध क्यों है ?"

शुरू-शुरू मे उसकी आंखों में अदृश्य संकोच का भाव आया, लेकिन धीरे-धीरे वह स्वयं ही दूर हो गया । अब तो अपना पन सा लिये हुये एक मधुर आकर्षण दिल मे भली-भांति अनुभव किया जा रहा है ।

बरसते मेह के तीखे शोर को चीरती हुई एक कार बहुत ही तेजी से गुजर गई । पहियों की रगड़ से फैला हुआ पानी दूर-दूर तक उछला इन दुर्दमनीय और प्रचण्ड लहरों को काटना एक प्रकार से मुश्किल है, फिर भी कार तो तश्तरी की तरह फिसलती हुई चली गई ।

'आपने मुझसे कुछ कहा ?" – युवती राज की ओर मुंह करके हठात् पूछ लिया ।

"जी !"

राज एकदम जैसे चौंक पड़ा । उसकी आखें युवती के आहत

श्रौर दयनीय हो श्राये चेहरे पर श्राश्चर्य से कुछ पल टिकी रह
उनके मध्य अब धुन्ध की पतली-सी दीवार उठ आती है, जो इस
चिपचिपे मौसम में श्रौर भी घनी होती जाती है ।

"मैंने कुछ कहा, याद नहीं ।"

दिमाग पर जोर देकर सोचता है, फिर भी उत्तर नहीं श्रा
यूं एक बात स्पष्ट हो गई, वह तरुणी उससे सहायता के लिये वह
है । यद्यपि इसका अन्दाज अलग है । असल में इनका एक मात्र
अर्थ है । शायद उसने सोचा होगा कि छाते वाला आदमी भला,
श्रौर उदार है । इसीसे मन में श्रद्धा जगी है, जिसे वह प्रत्यक्ष रूप
व्यक्त कर गई ।

उसने बड़े उत्साह से कहा—' चली श्राइये, इस तरह कब त
खड़ी रहेंगी .. ?"

"जब तक किस्मत खड़ा रखेगी ।"

"आपका मतलब वर्षा से है ?"

"जी नहीं । उस छाते से, जिसे आज मैं भूल आई हूं ...।"

"ओह !"

दोनों एक साथ मुस्कराते हैं ।

हवा का जोरदार झोंका फुहारों से भरा जैसे घूम पड़ता
श्रौर सीधा श्राकर युवती के मुंह पर प्रहार करता है । वह दु
कदम पीछे हट जाती है, फिर फुर्ती से छाते के नीचे राज की बगल
चलकर आ जाती है ।

अब राज के मुख पर दो बड़ी-बड़ी तरल श्रौर विश्वास-भरी
आंखें ठहर जाती है, जिनमें कोई संशय श्रौर भय नहीं ।

अकस्मात् राज के पूरे शरीर से झुरझुरी-सी दौड़ जाती है ।
जैसे युवती के भीगे बदन की रगड़ से उसके रोम-रोम सिहर उठते हैं ।

वर्षा का जोर बढ़ता जा रहा है । इनसे सड़क पर श्राने के

रूप में बदल गई है और साफ रात में। शोर इतना अधिक हो रहा है कि जैसे अपने भीतर की आवाज भी सुनाई नहीं देती।

राज ने बारिश को बड़े ठण्डे और अनासक्त भाव से देखा, कुछ देर में उसने दृष्टि लौटा ली।

महिला ने अपनी छाती में एक उसास भरी, बाद में अनमने भाव से बोली—"अब चलना चाहिये। यहां यूं बेकार में खड़े रहने से कोई फायदा नहीं।"

"बेशक!"

पता नहीं राज कैसे सहमत हो गया। अभी चलने के प्रति न तो उसकी इच्छा है और न मर्जी। शायद युवती का मन रखने के लिये उसने हामी भरली। शिष्टता के नाते भी ऐसे समय में इन्कार करना ठीक नहीं।

एक बार फिर वे एक दूसरे को आखों ही आखों में निहारते हैं और आहिस्ता-आहिस्ता फुटपाथ पर ही चल देते हैं। महिला सिमट कर और नजदीक आ जाती है। लगभग दोनों के बदन एक तरह से सटजाते हैं। स्पर्श का मजा लेते हुये वे बरसात में आगे बढ़ते हैं।

युवती ने बहुत हद तक पिंडलियों से ऊपर साड़ी और उसके नीचे के पेटीकोट को एक हाथ से खींच लिया है। यूं राज ने अभी तक हाथ बढ़ा कर उनका स्पर्श नहीं किया है। इस समय वह उसकी खुली और गोरी-गोरी पिंडलियों को छूना चाहता है, जैसे यह जानने को कि क्या उसकी त्वचा भी उतनी ही कोमल और चिकनी है, जैसी कि खुद उसकी पत्नी की है।

"इस प्रकार हम कहां तक चलेंगे ?"

सड़क को पीछे छोड़ एक गली में से गुजरते हुये वह पूछ बैठता है।

"केवल नरेन्द्र नगर तक।"

महिला ठण्डे और निर्विकार भाव से उत्तर देती है ।

अब राज उसके सिर को निर्निमेष दृष्टि से देखता है का पल्ला ऊपर से थोड़ा पीछे खिसक जाता है । मांग में सि भीगी भीगी रेखा साफ चमक रही है । क्षण भर के लिये वह गया । कुछ समय पहले तक मन में भरी हुई अनजान-सी म कर जैसे टूट जाती है ।

असल में वह इतनी देर तक उसे अविवाहित और समझ रहा था । लेकिन वैसे यह भ्रम होना स्वाभाविक है दृष्टि से देखने पर ज्ञात होगा कि उसका शरीर अभी भी गठा हु उसमें युवावस्था की रमणीयता है, चेहरे पर लावण्य आकार ग गया है ।

अचानक युवती का पैर फिसला और उसके मुंह से ह चीख निकल पड़ी । गिरते-गिरते भी वह सम्हली और राज तरह लिपट गई ।

इधर अपने आप उसका भी हाथ पीठ पर चला गया और भयभीत महिला को उसने सीने से सटा लिया । अब उसके भीगे तन में एक उष्ण सिहरन सी दौड़ गई, जिसमें विचित्र-सा सुख भावनाओं में बह जाने का एक मधुर आकर्षण है ।

"ओह !"—एक झटके के साथ दूर होती हुई युवती म चेहरे पर सज्जायुक्त मुस्कान बलात् खींच लाई ।

राज इस बीच प्रकृतिस्थ होने का धीरे-धीरे प्रयास

पानी रुकता नहीं । लगातार बरस बत्तियाँ तभी जल जाती हैं, मगर उनकी रोशनी के लम्भों पर बीने कपड़े-सी टंग जाती है ।

वे दह सेरों घूमकर एक

ो ही हलचल है । आस पास का वातावरण निश्चल है—निश्चल है,
ने घार में घिरा हुआ—सिमटा हुआ।

दोनों के बीच में एक छाता है, जो न उन्हें मिलाता है और न
क करता है। दोनों चुपचाप भीग रहे हैं। यूं एक छाता दो के
र पर्याप्त भी नहीं है।

"आप क्या देख रहे हैं ?"

एक साधारण-सा सवाल।

"पानी को।"

वैसा ही संक्षिप्त-सा उत्तर।

"पानी पीने की चीज है, देखने की नहीं।"

यह एक व्यंग है; जिसे वह मौन भाव से सुन लेता है—प्रति-
त्तर नहीं देता।

परस्पर दोनों के शरीर टकराते हैं। चलते हुए बराबर बदन से
दन की रगड़ लग रही है। कभी कंधे से कंधा और कभी बांह से बांह छू
जाती है। अधिक भीगने के कारण वे छाते के अन्दर सिमट रहे हैं।
क मुखर स्पर्श से मन न जाने कैसे-कैसे होने लगता है।

"बहुत देर हो रही है ...।"

युवती की आवाज में थोड़ी घबराहट है—थोड़ी बेचैनी है,
रन्तु उसी के अनुपात में नेत्रों में अधिक मोहकता है। यह ध्यातव्य
है।

"मुझे अच्छा लगता है।"

"क्या ?"—युवती ने चौंक कर पूछा।

"इस तरह बारिश में अधभीगे चलना।"

ज्ञात हुआ, जैसे कुछ शब्द पानी के शोर में डूब गये।

मुट्ठी और मजबूत हो जाती है ।

अब वह उसकी ओर भरपूर नजर से देखता है । वर्षा में भीग कर उसका सुन्दर मुख उज्ज्वल और कान्तिपूर्ण हो गया है । दिन भर की क्लान्ति और थकान के कोई भी चिन्ह उस पर नहीं है । गीली साड़ी के बदन से चिपक जाने के कारण उरोजों का उभार कमनीय नजर आता है । पीछे गदराये हुये नितम्ब भी औसत से ज्यादा बड़े और भारी दीख पड़ते हैं । जल की छोटी-छोटी धारायें कुछ खुली हुई मस्तक और ढीली-ढाली वेणी में से रिस-रिस कर नीचे आ रही है ।

सचमुच में राज अवाक् है । वह तो नारी के इस अप्रतिम सौन्दर्य पर मुग्ध है—आसक्त है ।

"देखो उधर ।"

युवती सहसा कहती है ।

"क्या है ?"

"उधर ।"

वह एक रोशनी के खम्भे की तरफ इशारा करती है, जिसके पीछे के मकान के बरामदे में कुछ लोग खड़े हैं । बत्ती के प्रकाश में अस्पष्ट दीख रहे हैं ।

"वे शायद हमें कौतुहल और विस्मय से देख रहे हैं ।"

"अच्छा ।"

लगा जैसे वर्षा का जोर निरन्तर बढ़ता जा रहा है । एक मादक संगीत है, जो सम्पूर्ण वातावरण में अनुगुंज पैदा करता है । लेकिन अब वह असह्य हो उठा है, कर्ण-कटु सा लगता है ।

"रात अधिक हो रही है ।"

"आपने भी ठीक कहा । इस वक्त सवारी ?"

वह पुनः खिलखिला उठा ।

युवती शायद झेंप गई ।

काफी देर भीगने से उसे बदन में कंपकंपी सी महसूस होने लगी । अभी जिन मोहक आंखों में रंगीन और गहरा नीलाकाश झांक रहा था, अचानक उसमें मेघ घिर आये । चिन्ता और बेबसी के मेघ ! दिल में एक अप्रत्याशित थकान-सी भर गई ।

"रुको, ज़रा रुको । शायद मेरे पैर की सैंडिल टूट गई है ।"

"अच्छा !"

राज ने किंचित् आश्चर्य व्यक्त किया । उसने इधर-उधर और आस-पास निगाहें दौड़ाईं, शायद खड़ा होने के लिए कोई उपयुक्त स्थान देख रहा हो । तभी फुटपाथ के बीच में खड़ा एक दूसरा नीम का पेड़ नज़र आ गया । वे उसकी दिशा में चल पड़े । उसके नीचे कुछ देर सुस्ता लेना ठीक रहेगा । उसने ज़रा सोचा ।

लेकिन उनके पहुँचने से पहले ही वहां एक जोड़ा छाते के नीचे मौजूद है । उनकी तरह अध भीगी हालत में, विवशता और परेशानी से घिरे हुए । एक छाता और उसके नीचे दो जने, एक स्त्री और एक पुरुष ।

आने वाले जोड़े को उन्होंने कौतूहल और विस्मय से देखा । विशेषकर राज पर स्त्री की हैरान-हैरान सी निगाहें गड़ी रह गईं । साथ वाले पुरुष की भी प्रश्न भरी दृष्टि राज की बगल में खड़ी तरुणी पर स्थिर हो गई । कोई कुछ नहीं बोला, जैसे आंखों ही आंखों में बातें हो रही हैं । कुछ सवाल है, जिनके उत्तर मूक पलकें अपने आप दे रही हैं ।

थोड़ी देर तक यह अनोखा खेल चलता रहा, तब अचानक आश्चर्य जनक परिवर्तन हो गया । हुआ यह कि इस छाते वाली युवती उस छाते के नीचे चली गई और उस छाते वाली इधर आ गई । इसके

याद कण्ठ से स्वर फूटा—"चलिये।"

"श... धू... छा!"

राज ने हवा और वर्षा के थपेड़ों में छाते को सम्हालने कोशिश की। अब वह चल पड़ा। बिना उस युवती की ओर ता जो अब तक उसके साथ थी एक तरह से उसकी हम-सफ़र थी।

दूर-बहुत दूर—निकल जाने पर छाते के नीचे अब तक ए आकृति ही नजर आती है। दूसरे छोर तक पहुँचते पहुँचते वह आकृ भी शून्य में विलीन हो गई।

वर्षा का जोर और शोर इतना ही है। सड़क इतनी ही निर्जन है। बिजली के खम्भे उतने ही उदास और खामोश हैं।

•

प्रतीक्षा का दर्द

•

•

बाबू जयनारायण ने ज्योंही घर मे प्रवेश किया, उसी समय पुत्री के जोर से रोने का स्वर उसके कानों में पड़ा। वह हठात् चौंक पड़ा।

दहलीज पर तनिक ठहरा, तब वह मन ही मन झुंझलाया—"लो, आते ही रोने से स्वागत हुआ है। दिन भर दफ्तर में फायलों से सिर मारो और घर आने पर यह मुसीबत! जाने कैसी विवशता है—।"

जैसे कोई कड़वी चीज अकस्मात् ही मुंह में घुल गई। उसका असर भीतर तक हो गया।

श्रीमति जी शायद तीखे कण्ठ से मुन्नी पर बरस रही हैं। स्वर

सहमकर पति ने धीमी और दबी आवाज में कहना चाहा, किन्तु दूसरी तरफ इतना धैर्य कहाँ ? वर्षोन्मुख मेघ अचानक गरज उठे ।

"हां-हां ! साफ-साफ क्यों नहीं कहते कि मैं कमाइन हूँ । बच्चों के प्रति मेरे दिल मे दया और ममता कतई नहीं । मैं एक तरह से इनकी दुश्मन हूँ । ये बच्चे मेरे नहीं, मेरी किसी सौत के हैं... ।"

गृह-कलह मे निपुण स्त्री की तरह पत्नी को सन्नद्ध होते देख, जयनारायण अपनी अस्थिरता को दबाकर, चुप हो गया । स्पष्ट है कि श्यामा के स्तर पर आकर झगड़ा करना न तो विवेक-सम्मत है और न बुद्धि संगत ! यद्यपि उसने खिन्न मन से कहना चाहा—"मेरे कहने का अर्थ यह है कि ... ।

पर श्रीमति जी बीच ही में उबल पड़ी "यह सब आपकी अनुचित कृपा का दुष्परिणाम है जिससे कि बच्चे इतने हठी, लापरवाह और नटखट हो गये । व्यर्थ के लाड़-प्यार और अकारण के पक्षपात से बच्चे बिगड़ते हैं, यह ध्यान रहे । ... दस-बारह बरस की बड़ी बेटी है । क्या चुन्नू को वह रख नहीं सकती ? अभी से घर का काम-काज नहीं करेगी तो सीखेगी कब ? बोलिये बोलिये .. ।"

रसोई घर से दाल के लगन की तीखी गंध आई । गृहिणी का ध्यान उधर आकृष्ट हुआ । वह फुर्ति से पाव पटकती हुई चल पड़ी ।

"मैं इन बच्चों को सम्हालूं या गृहस्थी के जंजाल को समेटूं । कुछ समझ मे नहीं आता ।"

बड़बड़ाती हुई श्यामा ने दाल की पतीली चुन्हे पर से नीचे कर रख दी ।

"लो, इस चुन्नू के बच्चे ने सारे कपड़े खराब कर दिये ... ।" पत्नी की तीखी कण्ठ ध्वनि इस बीच फिर गूंज उठी ।

बस, एक भारी सा हाथ उस नन्हें शिशु की पीठ पर पड़ा और वह पूरे गले का जोर लगाकर पंचम स्वर में चीखने लगा ।

अब लड़ने-जूझने के लिए कुछ भी शेष नहीं है। [illegible] चेहरा लेकर अनजाना-सा अपने कमरे की तरफ चल दिया। [illegible] आँखों उसकी ओर न सह सकने वाले अवसाद के गहरे सागर में [illegible] वह पूरी तरह डूब गया।

देखते-देखते वह बाहें फैलाकर अतीत और अनजाने [illegible] की परिधि में पलंग पर मानो ढेर हो गया।

दिन के जीर्ण पंखों पर संध्या की अभेद्य शान्ति उतर आई गली के मकानों की सूनी मंद-मंद वातावरण में हल्के-हल्के सुनाई आती है। घरों से निकलकर धुआँ ऊपर आसमान में घुल रहा है एक आलोकहीन मटमैली छाया क्रमशः गहरी होती जा रही है।

इस बीच मौन का लम्बा अन्तराल रहा। मुन्नी रोते-रोते शायद सो गई। कुछ देर तक पुन्नू पालने में कांव-कांव करता रहा। उसे किसी ने प्यार से सहलाया नहीं, चुप कराया नहीं। लगता है, गुड़िया लेते-लेते उसकी भी आँखें लग गईं। नींद में मजे से अंगूठा चूस रहा है। मुन्ना चुपके से बाहर खेलने के लिये खिसक गया।

श्यामा इस समय रसोईघर में व्यस्त है। वह आश्चर्य-जनक ढंग से अपने आपको काम में लगाये हुये है। उसके पतले-पतले हाथ यन्त्र की तरह अविराम गति से चल रहे हैं। संदेह नहीं कि सम्पूर्ण गृहस्थी का बोझ उसके दुर्बल कंधों पर अनायास ही आ पड़ा है, जिसे वह भारी मन और बुझे हुए दिल से निरन्तर ढोती आ रही है। इसके अतिरिक्त उसके सामने दूसरा कोई विकल्प भी नहीं है। उसकी व्यथित-सी आकृति और कमजोर-सी काया से तीन-तीन बच्चे जोंक की तरह चिपके रहते हैं। उसका बुरी तरह से खून चूसते हैं।

विडम्बना तो यह है कि इस घर में एक अकेली श्यामा को दिन-रात सहना पड़ता है। यह उसके स्वभाव और सेहत के लिये एक प्रकार का अभिशाप सिद्ध हुआ। वह मानों अपना प्रतिशोध लेना भी नहीं भूला। शीघ्र ही उसकी कंचन-सी दमकती काया एक कंकाल मात्र रह गई। उसका मटरा हुआ चेहरा तो कहीं गहरी टीस उत्पन्न करता है, जैसे एक रूखा दुर्दमनीय-सा विषाद उसमें सिमट आया है। गालों की हड्डियां उभर आई हैं। वह स्निग्धता, वह कोमलता न जाने कहां लुप्त हो गई। वे मोटी-मोटी प्यारी-सी सुन्दर आखें पता नहीं कब गड्ढे में धस गई। वे अब तेजहीन हैं—भावना शून्य हैं। वे पलकें उठाये खोया सा भाव लेकर केवल ताका करती है। उनमे तुरन्त ही हृदय द्रावक सूनापन झलक आता है।

जयनारायण ने दीर्घ निश्वास ली और बड़े उदास मन से सोचने लगा "पता नहीं, कुछ दिनों से श्यामा को क्या हो गया है? उसके मिजाज में कुछ-कुछ (सनकी-पन) सा आ गया है। किसी के बारे में कितना ही कुछ कहलो, पर सुनेगी नहीं ......।"

"... अचरज तो यह है, कि वह न ढंग से रहती है, न बोलती है, न खाती है, न पीती है। बस दिन-रात अशान्त हृदय और खीझ भरा-मन लेकर इधर-उधर घूमती रहती है। ... मालूम नहीं, उसे क्या हो गया है! न जाने उसका स्वभाव कैसा होता जा रहा है एकदम चिड़-चिड़ा, गुस्सैल और...और ... र ... भावना हीन... !"

जयनारायण को यह सब कुछ अच्छा नहीं लगता कि वह हमेशा अन्दर ही अन्दर घुटती रहे। उसे याद है- खूब याद है, जब कई वर्ष पहले वह श्यामा को शादी करके लाया था। उन दिनों बड़ी हसमुख, विनोद प्रिय और मिलनसार थी। यौवन पूर्ण हृदय मे अपूर्व उल्लास! तेजस्वी किन्तु तरल आखों में जीवन के नये-नये सपने! और एक छोटी अबूटी-सी मुस्कराहट मे खुले-खुले रसीले-गुलाबी अधर ... -

वह तो उसकी पहली झलक देखकर ही मोहित हो गया।

इन्द्रधनुषी सपनों की मुस्कान लेकर प्यारभरे बेसुध सिमटकर बीते।
कितने मधुर और उल्लास पूर्ण थे वे दिन ... ।

निश्चय ही आज भी श्यामा उन सब को याद करके रोमांचित हो उठती होगी। कॉलेज का अध्ययन समाप्त होना उसका। दर्द में आँसुओं की धारायें इन आँखों को निरन्तर भिगोती होंगी, जिनमें आज भी अतीत के स्वप्न सोये पड़े हैं ......

अभी उसकी उम्र ही कितनी है? ...... कुल कितने बसन्त देखे हैं उसने? — सचमुच में कोई ज्यादा नहीं। इस पर भी इन कुछ वर्षों में ही उसके एक के बाद एक तीन बच्चे हो गये। इससे उसकी जीवन-श्री लगभग नष्ट हो गई। उसका शरीर जैसे बुझ-बुझ गया। देखते देखते उसका स्वास्थ्य प्राय चौपट हो गया।

और अब चौथे के आकस्मिक आगमन की प्रतीक्षा में वह भयभीत है, उद्विग्न है, व्याकुल है।

इसी समय एक चीख सुनकर बाबू जयनारायण एकाएक चौंक पड़े। विचारों की शृंखला एक झटके से टूट गई। अचानक विश्वास नहीं हुआ, मगर श्यामा की हृदय-वेधक कराह ने तो सारा भ्रम दूर कर दिया।

"क्या हुआ?" — जयनारायण ने व्यग्र कण्ठ से पूछ लिया।

"पेट में अचानक दर्द उठ आया है।" कातर आँखों से पति की ओर देखकर श्यामा ने उत्तर दिया।

"इस समय .. ?"

जयनारायण की विस्मित आँखें अकस्मात् फैल गईं।

"जी ... हाँ ... ।"

इसके साथ श्यामा की आँखों से गर्म-गर्म आँसू निकल पड़े।

पति अधीर स्वर में बोले — "श्यामा! इसमें परेशान होने की क्या बात है! मेरी बात मानो। इस बार भी दवा लेकर सहज ही में छुटकारा पा लो...।"

"न...न...न... ।"

उसकी आँखें अज्ञात भय और आतंक से त्रस्त हो उठी ।

'मैं दवा ले-ले कर पहले ही बहुत भुगत चुकी हूँ । सेहत बिगड़ गई है । हो न हो, अन्दर ही अन्दर कोई रोग पल रहा है, औ...।"

"हूँ ।"

"इसके अलावा यह एक तरह की भ्रूण-हत्या है । यह पाप कौन करे ... ?"

"पाप ... ।"

पत्नी के इस सहज-सरल विश्वास पर जयनारायण के होठों पर एक वक्र रेखा खिंच गई ।

"अच्छा, अब दाई को बुलाकर ले आओ ।" श्यामा की भंगिमा अत्यन्त ही वेदनापूर्ण हो गई "यह असमय की पीड़ा तो मेरे प्राण लेकर ही छोड़ेगी ।"

कहते-कहते श्यामा ने अपना निचला होठ काट लिया ।

अब जयनारायण के पास कहने लिये कुछ भी नहीं है, मगर समय और परिस्थिति ने किसी अस्पष्ट अमंगल की आशंका पैदा करदी है । उसके अन्तराल में एक अज्ञात भय भी है । इधर पत्नी की त्रस्त विह्वल दृष्टि और मर्म-भेदी कराहें उसे एक पल के लिये भी चैन से बैठने नहीं देती ।

मुख पर गहन दुश्चिंता का भाव लेकर पति ने बड़ी मायूसी से कहा—"अ ..च...छा ।"

वह रात इतनी ही गहरी और उतनी ही उदास है । प्रकृति की बाहों में बर्फीला सन्नाटा लिये हुए वह एक तरह से निस्पन्द, मौन और मुर्दे के समान निर्जीव पड़ी है ......और......

असहायता, व्यथा तथा आक्रोश की अकृत्रिम भावना से भरती आ रही है। यह परिवर्तन आकस्मिक भी है और साथ ही साथ असम्भावित।

बाथरूम से लौटकर परमानन्द ने अपने हाथ-मुंह पोंछे, फिर स्नेहसिक्त कण्ठ से बोला—"रजनी! इस प्रकार तुम मुंह लटकाये क्यों बैठी हो? तुम्हारी तबीयत तो ठीक है ना?"

शायद मिसेज चन्द्रवाणी ने इस औपचारिक प्रश्न का उत्तर देने की आवश्यकता नहीं समझी। वे पूर्ववत् मौन साधे रहीं।

इस बीच परमानन्द ने तौलिया एक ओर फेंक दिया। अपने सिर के बालों पर हाथ फेर कर उसने गम्भीरता-पूर्वक कहना आरम्भ किया - "मैं पिछले कई वर्षों से देखता आ रहा हूं कि तुम्हारे हृदय की व्यथा और चिन्ता काली घटा बनकर तुम्हारे जीवनाकाश पर बुरी तरह छा गई है। लगता है जैसे इन सबसे तुम्हें मुक्ति मिलनी कठिन है...।"

इस बार मिसेज चन्द्रवाणी के मुंह से एक सर्द आह निकल पड़ी। इसके द्वारा अन्तर्पीड़ा की मार्मिकता उनके होंठों पर अपने आप बिखर गई।

वे थरथराये शब्दों में कहने लगी—"जिनके भाग्य में दुःख के कारण रोना लिखा हो, वे भला ...... ओह!"

तभी उनकी आंखें बरबस छलक आईं। वे भावाकुल सी हो सिसक पड़ी।

इस नैराश्य पूर्ण उत्तर से परमानन्द को एक गहरी ठेस लगी। उसका करुणार्द्र हृदय सहज ही में इसे सह न कर सका।

"जीवन जीने के लिए है। यदि इसे रो-रो कर घुटन के अंधेरे में व्यतीत कर दोगी तो इससे हानि किसकी होगी?"

एक प्रश्न-वाचक दृष्टि डालकर वह किंचित् मुस्कराया ... "रजनी! इस संसार में ऐसा कौन व्यक्ति है, जिसे कभी दुःख और पीड़ा ने सताया नहीं होगा। घटना, अघटना और दुर्घटना सदैव प्रत्येक व्यक्ति के जीवन के साथ परछाईं की भांति लगी रहती है। वह

निर्वसना

आज फिर मिसेज चन्दवाणी का मन अचानक क्षुब्ध एवं अशान्त हो उठा । सदैव वे अपने आक्रोश और अपनी व्यथा को अवचेतन में धकेलती आ रही हैं । निरन्तर प्रयास से वे इसकी बहुत कुछ अभ्यस्त हो चुकी हैं । लेकिन आज स्थिति भिन्न है । जब वे पुनः अन्तर्द्वंद्व के भंवर में फंस गईं तो वे चाहकर भी अपने आपको सुस्थिर एवं सुव्यवस्थित नहीं कर सकीं ।

वे आज तक परमानन्द के साथ व्यवहार की व्यर्थता को बर्दाश्त करती आ रही हैं । वैसे यह बाहरी दिखावा भर है, मगर अब यह धीरे-धीरे बोझ-सा बनता जा रहा है । इसे वे विवश-सी विमन से भी ढोती जा रही हैं । इसके विपरीत भीतर ही भीतर वे इसके प्रति

पिपासा, श्रद्धा तथा आक्रोश की अकृत्रिम भावना से भरती जा रही है। यह परिवर्तन आकस्मिक भी है और साथ ही साथ असम्भावित ।

बाथरूम से लौटकर परमानन्द ने अपने हाथ-मुंह पोंछे, फिर-स्नेहसिक्त कण्ठ से बोला—"रजनी ! इस प्रकार तुम मुंह लटकाये क्यों बैठी हो ? तुम्हारी तबीयत तो ठीक है ना ?"

शायद मिसेज चन्दवाणी ने इस औपचारिक प्रश्न का उत्तर देने की आवश्यकता नहीं समझी । वे पूर्ववत् मौन साधे रहीं ।

इस बीच परमानन्द ने तौलिया एक ओर फेंक दिया । अपने सिर के बालों पर हाथ फेर कर उसने गम्भीरता-पूर्वक कहना आरम्भ किया - "मैं पिछले कई वर्षों से देखता आ रहा हूँ कि तुम्हारे हृदय की व्यथा और चिन्ता काली घटा बनकर तुम्हारे जीवनाकाश पर बुरी तरह छा गई है । लगता है जैसे इन सबसे तुम्हें मुक्ति मिलनी कठिन है...।"

इस बार मिसेज चन्दवाणी के मुंह से एक सर्द आह निकल पड़ी । इसके द्वारा अन्तर्पीड़ा की मार्मिकता उनके होठों पर अपने आप बिखर गई ।

वे थरथराये शब्दों में कहने लगी—"जिनके भाग्य में दुःख के कारण रोना लिखा हो, वे भला ...... ओह !"

तभी उनकी आंखें बरबस छलक आईं । वे भावाकुल भी हो सिसक पड़ी ।

इस नैराश्य पूर्ण उत्तर से परमानन्द को एक गहरी ठेस लगी। उसका करुणार्द्र हृदय सहज ही में इसे सह न कर सका ।

"जीवन जीने के लिए है । यदि इसे रो-रो कर घुटन के अंधेरे में व्यतीत कर दोगी तो इसमें हानि किसकी होगी ?"

एक प्रश्न-वाचक दृष्टि डालकर वह किंचित् मुस्कराया ... "रजनी ! इस संसार में ऐसा कौन व्यक्ति है, जिसे कभी दुःख और पीड़ा ने सताया नहीं होगा । घटना, अघटना और दुर्घटना सदैव प्रत्येक व्यक्ति के जीवन के साथ परछाईं की भांति लगी रहती है । वह

झनझनाती हुई। सामान्य होना भी जैसे उनके भाग्य में नहीं है।

बालकोनी के एक सोफे में धसा परमानन्द आज का समाचार-पत्र पढ़ रहा है। इधर मिसेज चन्दवाणी के अन्तःकरण में प्रलयकारी बवंडर सा उठ रहा है। उस पर प्रभुत्व पाना एक प्रकार से असम्भव जान पड़ता है।

जब कभी उनकी भेंट परमानन्द से होती है तो निश्चित रूप से वे अपना बौद्धिक एवं मानसिक सतुलन खो बैठती हैं। शिष्टाचार-वश वे कुछ कह नहीं पाती, फिर भी वे उस पर नाराज है—बेहद नाराज! अब वह रोष भी घृणा तथा तिरस्कार में बदल चुका है। ज्वालामुखी की भाँति उनके अभ्यन्तर में विचित्र प्रकार की हलचल मची रहती है। लावे और धुएं में दम घुटता है। पता नहीं कब विस्फोट की घड़ी निकट आजाए और उसमें सब कुछ स्वाह!

एक ऐसी सुहावनी और मनोहारी सुबह परमानन्द ने हंसते हुए उनके घर में प्रवेश किया। मिस्टर चन्दवाणी का स्वर्गवास हुए लगभग छः मास हो चुके हैं। मिसेज चन्दवाणी काले परिधान में शोक की करुण प्रतिमा बनी चुपचाप बैठी हैं।

परमानन्द ने अपने स्वभाव के अनुसार बेफिक्री से कहा—"रजनी! हमें यह सब पसन्द नहीं। यह रोना, यह आंसू बहाना और यह शोक प्रकट करना बिलकुल बेकार है—फिजूल है। ये अतीत के ढकोसले हैं, जो हम आधुनिक युग में एकदम अर्थहीन, असगत और अव्यावहारिक लगते हैं। दिवगत आत्मा के प्रति हम सच्चे मन से प्रार्थना कर चुके हैं। अब उसके पीछे इस जीवन से सन्यास लेना कहा की बुद्धिमानी है!"

रजनी ने तिरछी चितवन से कटाक्ष किया। स्पष्ट है कि इस मनोविज्ञान कथन की यह सुनी-अनसुनी कर गई। वह तो अपने दिल में कुछ अन्य भाव लिए बैठी है।

"हूँम ...। आज कई महीनों के बाद तो यहां आए हैं सेम-

तुम्हारा पूछने के लिये। कोई मरे या जीये, तुम्हारी बला से। चिट्ठियाँ लिखीं, तार दिए, और सन्देश भिजवाये; लेकिन आप हैं, जो लौटकर सूरत तक नहीं दिखाई। मुझे बड़ी के ।"

इस उपालम्भ ने शीघ्र ही वांछित प्रभाव डाला।

परमानन्द के चेहरे पर एक भाव आ रहा है और दूसरा जा रहा है। किन्तु उनके होंठों पर चिर-परिचित मोहक मुस्कान खिल उठी, जिस पर रजनी मरती है—रीझ-रीझ जाती है।

"बात दरअसल यह है रजनी, कि मैं बिजनेस के सिलसिले में कभी कलकत्ता, कभी बम्बई और कभी दिल्ली तक बन-बावरे की तरह घूमता रहा। बस, इस बार तुम्हारा तार मिला और मैं सिर के बल भागा चला आया।"

इसके बाद की स्थिति स्वतः स्पष्ट हो जाती है। परमानन्द ने एक विदूषक की भांति अपनी उचित तथा अनुचित अभिनय कला का परिचय दिया। रूठी हुई प्रेयसी के मुँह से अचानक हँसी की बौछार बरस पड़ी और उसमें सारा मान बह गया ...

काले लिबास के स्थान पर सफेद आ गया। फिर सफेद कपड़ों का रूप भी भड़कीले वस्त्रों में बदल गया। शीघ्र ही वह शोक आयाम खत्म हो गया और उसके स्थान पर अब पुनः मस्ती भरी किलकारियें, आल्हादपूर्ण हँसी और हर्ष-विह्वल मुस्कानें गूंजने लगीं। इसके साथ प्रारम्भ हो गई क्लब की वे रंगीन रातें और पिकनिक की वे रमणीक साँझें, जिसमें व्यक्ति आत्म-विस्मृत हो खो जाता है।

इस तमाशा मौन दर्शक है दिनेश चंदवाणी, मिसेज चंदवाणी का एक मात्र किशोर बेटा, जो अपने पिता के आकस्मिक निधन पर शोक संतप्त है, उदासीन है, विपण्ण है।

अन्त में प्रलय की वह रात भी आ गई, जिसने मिसेज चंदवाणी के जीवन की गति ही बदल दी। वह आलोक सदैव के लिए बुझ गया। आनन्द का वह रस-स्रोत सदा के लिये सू

प्रमुदित वातावरण, मन-मोहक परिवेश ! धवल-चांदनी में डूबी रात्रि के प्राण सुख से ऊर्मिल हैं । उल्लसित आनन्द में निमग्न युगल-प्रणयी के पैर लड़खड़ा रहे हैं ।

"ओह ... परमानन्द ... ! आज ... तुमने ... पिलाकर ... ... हिक् ... ।"

"चुप । छि ... छि ... छि ... ।"

परमानन्द ने रजनी को अपनी बाहों में थामा और उसे पलंग पर लिटा दिया ।

"अच्छा । अब ... जाकर ... सो ... जाओ । ... मेरा ... सिर ... भारी हो ... रहा है ... । आँखें ... जल रहीं ... हैं ... ।"

रजनी के इस कथन पर परमानन्द को हल्की सी हंसी आ गई । उसके वासना आतुर होंठ किंचित् थरथराये । आंखों में कामुकता की तीव्र प्यास झलक आई ।

"रजनी ... रजनी ... ! मेरी ... हृदयेश्वरी ... ।"

और परमानन्द रजनी पर झुकता चला गया ।

"नहीं ... नहीं ... न ... हीं ... ।"

परन्तु आज विरोध में वह शक्ति नहीं है । अवज्ञा में वह बल नहीं है । तिरस्कार में वह भावना नहीं है ।

प्रायः कुछ ही देर में सब कुछ शान्त । दोनों अचेत अवस्था में पड़े हैं—मानों एक युग के पश्चात् दो विकल प्रेमी हृदयों का मधुर मिलन हुआ है ।

सहसा कमरे के द्वार किसी के धक्के से मर्मर का स्वर करके मौन हो गए । इसी समय मिसेज चतुर्वेदी की हठात् आंखें खुल गईं । अपने-आप को निर्वसना देख वे अत्यन्त घबरा गईं । अब वे यथा-सम्भव सुव्यवस्थित करने का प्रयास कर रही हैं ।

वह अजनबी और अज्ञात छाया तब तक उनकी दृष्टि से ओझल हो गई थी, केवल उसकी पीठ ही की थोड़ी सी झलक दिखाई पड़ी ।

घोर लज्जा, असीम, ग्लानि और आत्म-प्रताड़ना की तीव्र ज्वाला में वे शेष रात भर जलती रहीं।

एक प्रहर दिन बीतने के पूर्व ही उनकी आशंका ने सत्य का रूप ग्रहण कर लिया।

शेष रात के जीर्ण पत्रों पर दूसरा दिन भी उतर आया।

तभी व्याकुल कण्ठ की चीख सारे बंगले की दीवारों तक को हिला गई।

'दिनेश।''

मिसेज चंदवाणी हृदय-विदारक स्वर में रो पड़ीं।

दिनेश की खोज आरम्भ हो गई। शहर का कोना-कोना छान मारा, मगर उस निर्मोही का कहीं भी पता नहीं चला। लगता है, जैसे उसे धरती निगल गई। हवा उसे अन्तरिक्ष में उड़ाकर ले गई।

आज पांच वर्ष से ऊपर हो चुके हैं। देश के बड़े-बड़े शहरों की खुद परमानन्द खाक छान चुका है। किसी ने भी आकर कहा कि एक लड़के को हमने साधु वेश में हरिद्वार में देखा है तो मिसेज चंदवाणी अविलम्ब ही पंख लगाकर उड़ गईं। कोई समाचार देता है कि एक गोरा सा लम्बा लड़का बूट पालिश का थैला लिए दिल्ली के कनाट-प्लेस में घूम रहा है तो वे भूखी-प्यासी वहां भी पहुंच गईं। किसी ने संदेह व्यक्त किया कि वह कहीं बम्बई तो नहीं चला गया। फिल्म संसार का आकर्षण सैकड़ों होनहार युवक एवं युवतियों के अनमोल जीवन के साथ असंदिग्ध रूप से निर्मम खिलवाड़ कर रहा है। बस, मिसेज चंदवाणी वहां भी पहुँच गईं। लगता है जैसे उनकी ममता अन्धी होकर दर दर भटक रही है। एक क्षण का विराम भी अब असह्य हो चुका है। न दिन को चैन है और न रात को आराम!

अब तो उनके अन्तर्मन ने उन्हें उस दारुण अतीत में ले जाकर पटक दिया, जहां व्याकुल स्मृतियों के पुंज मैं गोले उठ-उठ कर चोट करने लगते हैं। उनके चेहरे पर अकस्मात् कारुण्य और कातरता का

ग्रस्त-पीड़ित भाव आ गया ।

सहसा मुखाकृति बदल गई । उस पर अत्यन्त कठोर भाव आ गये । देखते-देखते दुःख-दैन्य के स्थान पर रोष एवं घृणा के काले नाग फन ऊँचा करके विष उगलने लगे । हृदयाकाश में मेघ का एक छोटा सा टुकड़ा आया और बात की बात में समस्त अन्तः प्रदेश को आच्छादित कर गया । भावों के प्रबल झोंके ने तो आकर ध्वंस-लीला को अप्रिम सूचना दे दी ।

दुर्दम्य मेघ गरजे । दुर्निवार बिजली कड़की, चमकी और गिरी ।

पता नहीं कैसे मिसेज चदवाणी के हाथों में लोहे का छड़ आ गया । अब वे अज्ञात शक्ति से परिचालित होकर बालकोनी में आ गईं और परमानन्द के सोफे के पीछे खड़ी हो गईं । अत्यन्त क्रोधित होकर वे लोहे के छड़ से उसके सिर पर प्रहार पर प्रहार करने लगीं ।

'तुमने मेरा घर-संसार बर्बाद किया है ... नीच, ... कमीने ... कुत्ते ... ! मगर .. आज मैं तुझे जिंदा नहीं छोड़ूँगी ... नहीं ... छोड़ूँगी ... ।"

"रजनी ! यह तुम क्या कर रही हो ? रजनी ... ।"

परमानन्द की भयातुर चीख थोड़ी ही देर में मंद पड़ गई ।

●

चूनरी-संगल

•

•

एक लम्बी व्हीसल के बाद ट्रेन धीरे-धीरे रवाना हुई । काला धुंआ आकाश की छाती पर इकट्ठा हुआ और फैल गया । इंजिन के अगले हिस्से के पास वाष्प का एक छोटा सा बादल उठा और सूं की भद्दी आवाज के साथ प्लेटफार्म पर खड़े मुसाफिरों को ढक गया ।

आज फर्स्ट-क्लास के कूपे में केवल दो प्राणी हैं, एक स्त्री और एक पुरुष । दोनों एक ही सीट पर पास-पास बैठे हैं । लगता है, वे परस्पर परिचित हैं । स्नेह-सिक्त दृष्टि और मैत्री-पूर्ण मुस्कान से वे एक-दूसरे को निःसंकोच भाव से निहार रहे हैं । उनमें गाढ़े अनुराग की व्यंजना है ।

पुरुष के लम्बे-चौड़े डील-डौल पर भारतीय सेना की गौरवशाली

वर्षों होना पा रही है। इससे व्यक्तित्व में विस्तारपूर्वक निखार आ गया है। कैसी निश्चितता एवं संतोष है उसकी मुद्रा में। शायद मोर्चे से लौटकर फर्जों पर घर आ रहा है।

स्त्री के नये रेशमी कपड़े चमकदार हैं। लाल रंग की साड़ी में वह नव विवाहिता लगती है। बात-बात में एक अधूरी मुस्कान के साथ दुल्हन की तरह उसका लजाना मन को भाता है। ललाट पर गोल बिंदी है। माग में गहरा सिंदूर है। लाल और हरे कांच की चूड़ियों से उसकी दोनों गोरी कलाइयां भरी हुई हैं। जब मनोविनोद में हुबे पति धीमे कण्ठ से हास्य-पूर्ण प्रसंग छेड़ देते हैं तो युवती के मुंह से मधुर हंसी की फुलझड़ी अनायास छूट पड़ती है, तब उसका सिर हिलता है और धूप की रोशनी में नाक की लौंग से एकाएक सतरंगी किरणें छिटक पड़ती हैं।

वे दोनों नव-विवाहित दम्पत्ति हैं, सुदूर अरुणाचल से चले आ रहे हैं। पूरी यात्रा थकान एवं ऊब से भरी हुई है फिर भी वे दोनों इसे अम्लान भाव से बिना किसी दुविधा के प्रायः समाप्त कर लेना चाहते हैं। यही उनके यौवनपूर्ण मुख से ज्ञात हो रहा है। वैसे इस सफ़र के प्रति उनके हृदय में कोई अनिच्छा और कटुता नहीं, बल्कि आशा के अनुकूल उत्साह और उमंग है, जिसे सहज ही में देख सकते हैं। अतः उन्हें यह सब विशेष रूप से अप्रिय एवं असुविधाकर नहीं लगता।

युवती ने खिड़की खोली और कुहनी धीरे से टिकादी। शीतल वायु का एक अल्हड़-सा झोंका आया और वह उसके हर्ष विह्वल मन को चुपके से छू गया। उसने तिरछी चितवन से पति को देखा तो वे और पास सरक आये। देखते-देखते अधरों पर खिलने वाली मुस्कान की गुलाबी प्रभा कपोलों तथा आंखों से झरने लगी। यह असर है पति की उस मीठी-मीठी नज़र का, जो अपनी मूक वाणी से अन्तर्मन के रहस्यमय गुप्त भेद खोल देना चाहती है।

कुछ देर तक पति चित्र-लिखित-सी भंगिमा में एक प्रकार से शान्त एवं निरुद्विग्न बैठे रहे, जैसे वे प्राणेश्वरी की रूप-सुधा को अपनी प्यासी आँखों से पी लेना चाहते हैं। फिर तृप्ति की अंगड़ाई लेकर वे उसकी पूर्णों से भी कोमल गोदी में मौन भाव से लेट गये।

सर्व प्रथम पुरुष की निगाहें प्रेयसी की बाँकी चितवन से टकरा गईं, फिर वे फिसल कर खिड़की के बाहर अपलक देखने लगीं। वहाँ ऊपर आसमान के आंचल में तारों को समेट कर रात बेखबर सो गई।

अब नींद की परियें उसे मीठे-मीठे सपनों की लोरियां सुनाकर अवश करती हैं। उसका एक खास अन्दाज से पलकें उठाना और उनमें कम्पन ले आना यह जाहिर करता है कि वह जल्दी ही सो जाने वाला है। अब अधिक देर जागने की उसमें कतई सामर्थ्य नहीं।

पत्नी का एक हाथ स्वत: ही पुरुष के बालों से खेलने लगता है। कभी बालों से निकल कर उंगलियें मुँह और नाक को छू लेती हैं। लेकिन उसका ध्यान अन्यत्र है। दृष्टि कहीं शून्य में ठहर गई है, जहाँ विगत स्मृतियों का जाल-सा फैला हुआ है। धुंधला-धुंधला कोहरा छटता है और कुछ चित्र स्पष्ट रूप से दीखने लगते हैं।

इस बीच ट्रेन पूरी रफ्तार पकड़ चुकी है।

नेफ़ा की हिम-मण्डित पहाड़ियां, जिस पर जीवित अवस्था में पशु-पक्षी तो क्या निरे पेड़ों के ठूंठ भी नजर नहीं आते। कभी-कभी गलती से कोई भूला-भटका पक्षी उस विराट सन्नाटे को चीर कर पंख फड़फड़ाता है तो वह शीघ्र ही इन असीम गहराइयों में खो जाता है। दूर तक सनसनाती हुई तुषार-भरी ठण्डी हवा, जो तीखे तीर की तरह घुस कर पूरे पहाड़ी अंचल को ही छलनी कर जाती है। इसके विपरीत यहां किसी पहाड़ी झरने का कल-हास, मानव-कण्ठों की पुकार अथवा नभचरों का कलरव बिल्कुल सुनाई नहीं पड़ता। बस, छोटे-छोटे तैरते हिम-खण्डों से भरी नदी एक विशाल अजगर की भांति धीरे-धीरे रेंगती हुई दीख पड़ती है!

अचानक हिमालय के बर्फीले सीने में युद्ध की ज्वाला भड़क उठी। देखते-देखते उसके धवल गिरिशृंग रक्त-रंजित हो गये। बारूद और धुयें ने उसकी नीरवता को एक हलचल में परिणत कर दिया, जिसके कारण चिर काल से शान्ति पूर्वक रहने वाले दो पड़ोसी सदैव के लिये दुश्मन बन गये।

एक दिन जिसको भाई कहकर गले लगाया था—वही आज आस्तीन का सांप बनकर डस गया। उसने पीठ में छूरा भोंक कर देश के स्वाभीमान को जगा दिया। इससे भारत के रण-बांकुरे सपूत आज विश्वासघाती चीनी शत्रु के लहू से पवित्र हिमालय का अभिषेक कर रहे हैं। स्वतन्त्रता की रण-चण्डी अपना खाली खप्पर नर मुण्डों से भरने लगी है।

एक भयानक युद्ध के बाद सर्वत्र शान्ति छा गई। शत्रु पक्ष की तोपों की गर्जना अब चुप है। उनके बड़े आक्रमण को भारत के गर्वीले जवानों ने अपने प्रबल प्रतिरोध से विफल कर दिया। वे बहुत-सी युद्ध सामग्री छोड़कर कायरों की भांति पीठ दिखाते हुये भाग गये।

इसी समय रैड-क्रॉस का एक सहायक दस्ता बड़ी तत्परता से आगे बढ़ा और थोड़ी ही देर में उस पहाड़ी पर आकर चारों तरफ फैल गया। उनके पास फर्स्ट-ऐड बॉक्स के अतिरिक्त और भी आवश्यक साज-सामान है। घायल सैनिकों का उपचार करने में वे शीघ्र ही सलग्न हो गये। फिर उन्हें वे स्ट्रेचर पर डालकर उस दुर्गम पहाड़ी रास्ते को पार करते हुये नीचे खड़ी लोरियों में रखने लगे।

प्रातः काल से ही आज घना कोहरा छाया हुआ है। इस कारण सहायता कार्य में अनावश्यक विलम्ब हो रहा है। इसमें संदेह नहीं कि प्रकृति के इस अप्रत्याशित प्रकोप के सम्मुख आज का मानव असहाय, पंगु और विकल्प-शून्य ज्ञात होता है। सचमुच में उसे अपनी अकिंचनता तथा असमर्थता का कितना तीखा बोध हो रहा है, यह एक तरह

से चिन्ता का विषय है। इस पर भी वह चुनौतियों को साहस और धैर्य से स्वीकार करके उसका प्रतिकार करने के लिये सतत प्रयत्नशील जान पड़ता है। बीच-बीच में अवरोध आते हैं, रोड़े और पत्थर उसका रास्ता रोकते हैं, फिर भी वह अपने डगमगाते पैरों से निरन्तर आगे बढ़ता रहता है।

ठण्डी हवा का हठात् एक तीव्र झोंका आया और वह जैसे हड्डी में कपकंपी उत्पन्न करके चला गया। नर्स के मुंह से एक दर्द सीत्कार-सी निकल पड़ी और वह अपने ऊनी लबादे में सिमट कर रह गई। अपना मुंह पोंछ कर और आंखें मसलते हुये उसने एकबार फिर सामने देखना चाहा, लेकिन एक सांय-सांय करती सफ़ेद दीवार के अतिरिक्त कुछ भी दिखाई नहीं दिया।

उसके साथ वाले व्यक्ति इधर-उधर चले गये हैं। सावधानी-पूर्वक घायल सैनिकों की खोज जारी है। इस बीच वह अकेली रह गई। स्वाभाविक रूप से नारी मन घबराया और अचिंतनीय परेशानी से कलेजा कांप-कांप आया। फिर भी कर्तव्य का बोध ऐसी हतोत्साहित भावनाओं पर विजय प्राप्त कर ही लेता है। चेतना में नई शक्ति भर देता है, जिससे गिरता हुआ आत्म-बल पुनः सन्तुलित हो जाता है।

चलते-चलते सहसा उसे एक ठोकर लगी। वह एकदम जैसे चौकन्नी हो गई। आंखें झुकाकर पैरों के पास नीचे देखा तो अवसन्न रहगई।

लाश ! निश्चित रूप से यह एक निर्जीव लाश है जिसके अवयव निस्पन्द है और चेहरा विकृत है। हाथ-पाव लहू-लुहान हैं और आंखें कांच के टुकड़ों की तरह पलकों में निश्चल हैं। निःसदेह यह एक सैनिक की क्षत-विक्षत देह है, जिसका लहू निकल--निकल कर पास के छोटे-छोटे गड्ढों में पाले के कारण जम गया है।

पता नहीं कैसे उसकी नस-नस मे भय की लह

दौड़ गई। एक मर्द के दिल में ऐसे भाव का उदय होना असम्भव है। निश्चय ही ऐसी डरपोक तो वह कभी रही नहीं। ... फिर ? उसके धीर मन में कई बाधायें उठती हैं एक प्रकार से आनी-पहचानी, जिनके प्रभाव से लड़खड़ाते हुये कदम एक दम स्थिर हो जाते हैं।

कर्तव्य की भावना से प्रेरित हो वह घुटनों के बल झुककर बैठ गई। उसने नाक पर उंगली रखी तो सांस बंद-सी मालूम हुई। बदन पर हाथ फेरा तो वह बर्फ के समान ठण्डा ज्ञात हुआ। ...अब ?

उसने स्पष्ट रूप से देखा कि घावों से बहने वाला रक्त तो चिंता-जनक स्थिति का संकेत देता है।

वह घबराहट में सहायता के लिये चिल्लाई, मगर उसकी व्यग्र कण्ठ की ध्वनि उस कोहरे में डूब कर रह गई। कोई प्रत्युत्तर नहीं—कोई सहायता नहीं।

अब वह निराश हो गई। भला, अकेली वह करे भी क्या! फिर बेदम लाश को ढोने से भी क्या फायदा! व्यर्थ में कष्ट होगा। अच्छा है, इसे यहीं छोड़कर आगे की सुधि ले।

यही सब सोचकर आगे बढ़ने के लिये वह तैयार हो गई।

वह कुछ दूरी पर गई होगी, अकस्मात् उसके पांव जहां के तहां ठहर गये, जैसे किसी ने उनमें मोटी-मोटी बेड़ियां डाल दी हों। आगे चलना एक तरह से मुश्किल हो गया। जाने कैसी मन में आशा और विश्वास का नन्हा-सा अंकुर फूट पड़ा—"हो सकता है कि उस घायल सैनिक की देह में प्राण शेष हों ...किसी भी तरह बचाता...।"

अचानक दुविधा और अनिश्चय की स्थिति खत्म हो गई। पता नहीं किस अज्ञात प्रेरणा के वशीभूत हो वह उल्टे पैरों लौट पड़ी। वहां पहुँच कर उसने जरा हिम्मत से काम लिया। बड़ी कठिनाई से उसने लाश को अपनी पीठ पर रखा। इसके बाद अपनी फूली सांस और असन्तुलित चाल को साध कर वह धीमे-धीमे कदमों से चल पड़ी।

हथेली पर चिबुक टिकाये और चलती ट्रेन की खिड़की में से बाहर की तरफ देखते हुये युवती के अधरों पर आत्म-विश्वास तथा विजयोल्लास की मधुर मुस्कान खिल उठी।

"... निश्चित रूप से वह सफर कितना कष्ट-साध्य और प्राण घातक था। एक एक कदम सम्हल-सम्हल कर रखना पड़ता था। इस पर भी ठोकरों पर ठोकरें ! रुकावटों पर रुकावटें। लेकिन मैंने हार नहीं मानी। अपने गिरते हुये साहस को बटोर कर मैं अविराम गति से चलती रही। विश्राम का कोई नाम नहीं—रुकने का कोई काम नहीं। परिणाम-स्वरूप मेरे दोनों पैर सूज गये उनमें धीमा-धीमा रक्त-स्राव होने लगा। कोहरे की दीवार से छन कर आने वाली बर्फीली हवायें सीधी सांसों में भर जाती और उनमें धुंधला-धुंधला अंधेरा-सा घिर आता। आंसुओं की धारायें निकल पड़तीं, घड़ी-घड़ी में सांस फूल उठती। इस पर मैं तनिक रुकती और फिर चल पड़ती...तब...।"

युवती ने झुक कर बहुत ही प्यार से सोये हुये पति के ललाट पर एक चुम्बन अंकित कर दिया।

गाड़ी बड़ी तेज़ी से खटर-पटर करती हुई भागी चली जा रही है .....

टन।

कहीं सुदूर किसी गिरजे की घड़ी ने एक घन्टा बजाया। अर्ध-रात्रि का निष्करुण सन्नाटा अचानक सिहर उठा। मचलती हुई हवा भी क्षण भर के लिये स्तब्ध रह कर ठहर गई।

नर्स हठात् चौंकी। नींद से बोझिल पलकों को मसलकर उसने सुस्त उबासी ली फिर अर्ध निमीलित नेत्रों से पलंग पर सोये मरीज को टकटकी लगा कर देखने लगी। व(

पड़ा है।

"नर्स !"

"जी।"

"मेरी तो राय यह है कि अब तुम्हें आराम करना चाहिये।"

"आराम ?"

नर्स के होंठों पर सूखी-सी हंसी की छाया फैल गई।

"डॉक्टर ! मैं यहीं ठीक हूं।"

"मैं सब जानता हूं।" आत्मीयता से भरी निश्छल स्नेह की चमक अनायास ही ड्यूटी-डाक्टर के चेहरे पर निखर आई—"आज तीन दिन से देख रहा हूँ कि तुम इस पलग से लगकर बैठी हो। हालांकि हम लोगों का विचार था कि यह घायल सैनिक बचेगा नहीं, लेकिन उसे मौत के मुंह से खींच लाने का श्रेय केवल तुम्हें ही है। तुम्हारे अटूट विश्वास और अपार धैर्य ने इसे बचा लिया, इसमें कोई शक नहीं।"

"डाक्टर !"—नर्स का स्वर एकाएक जैसे भीग गया—"मैं समझती हूं कि विश्वास में बड़ी शक्ति होती है, वह असम्भव को भी सम्भव बना देता है ...।"

"बेशक !"

डॉक्टर ने समर्थन में सिर हिलाया—"अब वह खतरा पूरी तरह टल चुका है, तुम निश्चिन्त रहो।"

"उन्हें होश आ जाय तो ...।"

"अच्छा-अच्छा। जैसी तुम्हारी मर्जी।"

नर्स का दृढ़ निश्चय देखकर डाक्टर चला गया।

यह तेजपुर का मिलिट्री हॉस्पिटल है। सीमा पर घायल होने वाले सैनिक बड़ी संख्या में यहां आये हैं। उनके उपचार की समुचित व्यवस्था है। देश के कोने-कोने से डॉक्टर कम्पाउन्डर और नर्सें उनकी सेवा के लिये यहां एकत्रित हुये हैं। उनमें नया उत्साह है—नया जोश है ! मातृभूमि पर प्राणोत्सर्ग करने वाले लाडले सपूतों की सेवा में एक निराला आनन्द है—एक अलौकिक सुख है। यह सचाई यहां आकर दिन के प्रकाश के समान उज्ज्वल हो जाती है।

नर्स के मुँह से अचानक दीर्घ निःश्वास निकल पड़ी। इसके बाद उसने भरी-भरी दृष्टि से वार्ड के इस हाल में चहुँ ओर देखा। इसमें लगभग बीस या पच्चीस बेड हैं। कई घायल सैनिक अभी तक अचेतावस्था में पड़े हैं। कुछ ऐसे भी हैं, जो असह्य शारीरिक यातना भोगते हुये कभी-कभी मन्द-मन्द स्वर में कराह उठते हैं। उनके प्रति सहज ही सहानुभूति का भाव हृदय में जागृत हो जाता है।

नर्स ने उधर से अपना ध्यान हटाया। तब वह अपने पास के पलंग में अधिक रुचि लेने लगी। वह अब अपलक निहार रही है।

ये कैप्टिन हैं। उसके लिये बिल्कुल अपरिचित और अनजान! केवल मानवीय सद्भावना एवं आन्तरिक संवेदना के वशीभूत हो उनके पास खिंचकर चली आई। अपने पेशे के नाते यह एक तरह से नियम विरुद्ध है। एक के प्रति यह स्नेह प्रदर्शन सर्वथा पक्षपात पूर्ण है, अनुचित है। लेकिन वह अपने हृदय के प्रबल आग्रह को घड़ी भर के लिये भी टाल न सकी और उसके निर्देश के अनुसार आज तक वह इस पलंग के पास जमी रही। वैसे एक राष्ट्र वीर की सेवा करने का उसे जो सुअवसर मिला है, वह खोना नहीं चाहती। सहे दिल से वह इस सम्मान से वंचित रहने के लिये कदापि तैयार नहीं है।

उस दिन सैला पहाड़ी के भयानक युद्ध में ये बुरी तरह घायल हो गये थे। कहते हैं कि अन्तिम क्षण तक ये अपनी छोटी-सी सैनिक टुकड़ी को लड़ने के लिये वीरोचित आदेश देते रहे। शत्रु पक्ष की अन्धाधुन्ध गोलियों की बौछार के सामने जब पाँव उखड़ने लगे, तब भी ये टस से मस नहीं हुये। इनकी सिंह गर्जना से उत्तेजित हो शेष सैनिक भी खुलकर शत्रुओं से लोहा लेने लगे। उनका प्रत्याक्रमण बड़ा भयंकर था। लेकिन दुर्भाग्य से शत्रु एक के अनुपात में लगभग सौ! इसके अतिरिक्त, वे मशीनगनें और मोर्टार तोपें भी ले आये। उनकी लोमहर्षक गर्जना में उन मुट्ठी भर वीरों की शौर्यपूर्ण आवाज भी डूब गई।

अतीव श्रद्धा और भक्ति से माँ का जैसे मस्तक झुक गया। लगा कि सभी यह-यह दिन से वह अपने हृदय के पवित्र भावों की मंजरि उसके चरणों में अर्पित कर देना चाहती है।

कौन कहता है कि हमारा देश दुर्बल है, प्रतिरोध की भावना से सर्वदा रिक्त है! किसी अभाव जनित रोग से पीड़ित है! अब तक ऐसे वीर—शिरोमणि मां-रत्न जीवित हैं, किस विदेशी में इतना साहस है कि वह इस स्वाभिमानी देश को दासता की बेड़ियों में जकड़ दे! आज हिमालय पर आग लगी है। शत्रुओं की गगन भेदी तोपें उसके हिमाच्छादित मस्तक को चीरने के लिये आतुर हैं। आज भी राणा प्रताप और छत्रपति शिवा की परम्परा में आस्था रखने वाले महावीर अपने शोणित से उसे बुझाने के लिये सतत प्रयत्नशील हैं। चट्टान से भी कठोर उनकी छातियों से टकरा-टकरा कर शत्रुओं की गोलियें चकनाचूर हो रही हैं।

धन्य हैं वे वीर, जो आज सारे देश के मुकुट मणि हैं—हृदय के हार हैं।

भावोद्रेक में युवती सोचती चली गई ... ..

तभी एकाएक ट्रेन रुकी। शायद कोई स्टेशन आ गया है। यहां कुछ देर ठहरकर वह शीघ्र ही आगे चल पड़ी।

एक झटके के साथ नर्स की विचार शृंखला हठात् टूट गई। बड़े यत्न से वह पुनः उसकी कड़ी जोड़ने लगी। परन्तु इस बार सम्पूर्ण दृश्य ही बदल गया।

"डॉक्टर! मैं मोर्चे पर जाना चाहती हूँ ...।"

"तुम ?"

अनायास ही डॉक्टर की प्रश्न-भरी दृष्टि उसके मुख पर केन्द्रित हो गई।

"जी हां। मैं ...।"—बड़े धैर्य से नई नर्स ने उत्तर दिया।

स्वर मे पुनः चिल्लाने लगे "...आपने गिरगिट के समान जो रंग बदले हैं, उसे मैं खूब जानता हूँ । वाह ! मेरी लड़की अच्छे संस्कारों वाली है। सुशिक्षित है, सुन्दर है, सुशील है । गृह-कार्य मे निपुण है। याद है न, खूब यशगान किया था उस दिन। ...नाम है उसका जमना ! दुर्भाग्य से जन्म-पत्री खो गई है । नाम से ही लग्न निकलवा लें । अरे वाह, खूब अभिनय किया । मेरी आंखों में अच्छी धूल झोंकी । और ... और ... अब ।"

"मेरी बात तो सुनिये, फिर आप कुछ भी कह लीजिये ... ।"

अन्त में नारायण सिंह दुःखी-दीन बन कर गिड़गिड़ाया । स्पष्ट है कि उसके याचना करते हुये नेत्र सहसा आर्द्र हो आये ।

"देख, नारायण ! यह तो मैं पुरानी मित्रता का इतना लिहाज कर रहा हूँ, वरना कोई दूसरा होता तो पता चलता ।" आँखें निकाल कर विक्रम इस दफा भी चीखा ।

समधि के साथ आये पंडित ठाकुरदास ने भी मुंह खोलकर हवन की अग्नि में घी की आहुति दी ।

"नारायण सिंह जी ! हमारे जजमान तो नेक दिल, और सज्जन पुरुष हैं, इस वजह से चुप रह गये ।"

नारायण के मुंह पर ताला ठुक गया । एक अज्ञात अपराध की भावना से अभिभूत उसका सिर झुकता चला गया ।

"वाह ठाकुर साहब ! आपने भी खूब निभाई मित्रता ! सच-मुच में अनुकरणीय है !"—पंडित जी इस बार फिर विष-वमन करने लगे—"अपनी अशुभ एवं दुष्ट ग्रहों से युक्त लड़की को इन्हीं के गले बांधनी चाही । यह तो अच्छा हुआ जो हमारे खास आदमी ने लड़की के असली नाम व जन्म-कुण्डली के सम्बन्ध मे समय पर सूचना दे दी । इस कारण हम शीघ्र ही सचेत हो गये, फिर भी आपने तो अपनी ओर से कोई कसर नहीं छोड़ी ।"

नारायण को लगा कि उसकी धमनियों में रक्त जम-सा गया है। अपमान की यह यन्त्रणा कितनी तीखी है, यह तो भीतर ही भीतर उसका दिल जानता है।

"अरे, इन्होंने तो मित्रता के नाम पर चार चांद लगाये हैं।" होठों पर कड़ुवी व्यंग्यात्मक मुस्कान लेकर विक्रम सिंह कहने लगे— "यह तो हम ही मूर्ख हैं, जो इसके कहने में नहीं आये।"

कुछ देर तक वे कहनी—अनकहनी कहकर लौट गये। नारायण सिंह पत्थर का कलेजा करके इस कड़ुवे घूट को बड़ी मुश्किल से पी गया। क्या करता? लाचारी जो है!

यह है जमना!

एक अनाम तनाव के बीच खड़ी है चुपचाप। अपरिभाषित घुटन से भाराक्रान्त है उसका मन। लगता है,जैसे वह अपनी भावनाओं की परिभाषा भूल गई है। शब्द तो हैं, मगर वे भावाजहीन खामोशी में पूरी तरह डूब गये हैं।

एक प्रकार से निष्प्राण देह, रूखे केश और सूखे-सूखे होंठ! आज जीवन विषम पहेली बन कर कहीं काटो में उलझ गया है, सहज ही में छुटकारा नहीं। पलकों की गहराइयों में हृदय की दारुण व्यथा का हाहाकार कालिमा बनकर छा गया है।

इसके लिये पंडित लोग कहते हैं कि यह लड़की चूनरी-मंगल है। विवाह में यह सबसे बड़ी बाधा है। कई बार इसका प्रदर्शन हो चुका है। यद्यपि इसके सौन्दर्य को देखकर सभी पसन्द कर लेते हैं, परन्तु पंडित जी जब लग्न निकालने बैठते हैं तो बुरे और कड़े ग्रहों से युक्त चूनरी-मंगल सामने आ जाता है। इस कारण लड़के और लड़की के 'नाम-जोड़' नहीं मिलते। बात बीच ही में टूट जाती है। जाने किस अशुभ घड़ी में इसका जन्म हुआ है कि जन्म-कुण्डली अच्छी बनती ही नहीं। बस, देखते ही पण्डितों का माथा ठनकता है और वे एक राय

से सहमत होकर घोषणा कर देते हैं कि किसी भी स्थिति में इस स
का लग्न हो नहीं सकता । यदि जान बूझ कर इसकी अवहेलना
गई तो वर और उसके परिवार पर निश्चय ही अशुभ ग्रहों का प्र
होगा वैसे इस समस्या का कोई उपयुक्त समाधान भी ज्ञात नहीं हो
कोई करे भी क्या !

जब व्यक्ति चारों तरफ से निराश हो जाता है और उसे वि
जटिल समस्या का कोई युक्ति-संगत विकल्प नजर नहीं आता तो
हारकर झूठ, छल—फरेब का आश्रय लेता है । ठाकुर नारायण
ने भी यही किया । उन्होंने लड़की का नाम बदलकर जन्म-पत्री
चाने की बात उठाई । लेकिन यह भी उनका भ्रम निकला । इसमे
मात्र भी वे सफल न हो सके । पता नहीं उनके कहां से शत्रु पैदा
गये, जिन्होंने उनकी चाल का शीघ्र ही भण्डा फोड़ दिया ।

अन्त में, यह छल ही उनके लिये घातक बन गया । आज
कुत्सित कार्य के लिये उनकी सर्वत्र घोर निंदा-स्तुति हो रही है ।
अपना मुंह दिखाने के काबिल भी नहीं रहे । कैसा भाग्य का वि
है, जिसके कारण उनकी यश और कीर्ति का सूर्य अस्त होने जा
है ।

इस विडम्बना का सबसे अधिक प्रहार हुआ है तो नि
जमना पर । अपने माता-पिता को अत्यधिक चिन्तित और दुःखी देख
किस सन्तान का दिल बैठ न जाये ! भीतर ही भीतर उद्वेग ज
क्लेश से उसका अन्तस झुलसता है । अपने आपको विकल्प-शून्य
निष्क्रिय पाकर वह शीघ्र ही एक दीपक की तरह बुझ जाती है,
को बाती में से केवल कसैला धुंआ ही निकला करता है ।

आशा के विपरीत अब तो उसे भी विश्वास होने लगा है
हो न हो वही अभागी है, मनहूस है, जन्म-जली है । इसी के का
परिवार के सारे व्यक्ति परेशान हैं, हताश हैं । अब इसमें संदेह

रत्ती भर गुंजायश नहीं।

चिन्ता, भय और अविश्वास ! ये भावनाएं अब उसके दैनिक जीवन मे चिर सगी है। इनसे परित्राण पाना असम्भव-सा लगता है। लगा मानो सिन्धु का शान्त जल एकाएक उद्वेलित हो उठा है। उसमें लोल लहरें ऊंची नीची होती हैं और विक्षुब्ध होकर मानस-तट से टकराती हैं। इसके बाद विकल ध्वनि-प्रतिध्वनि अन्तराल में एक टीस-सी पैदा करती है। स्पष्ट है कि यही उसकी नियति है !

यही असहनीय स्थिति कई दिनो तक यथावत् चलती रही। बीच में कोई अवरोध उत्पन्न नहीं हुआ। लेकिन एक दिन अचानक उसके मन मे एक विचार आया। कालान्तर मे वह अपनी गहरी जड़ें जमाने लगा। इसका अनुकूल प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। कुछ दिनों तक वह उसे बलात् दबाती रही, फिर उसे अपनी विवशता का जल्दी ही एहसास हो गया। उसने बड़ी झिझक और संकोच के साथ सबसे पहले अपनी मां के सामने उसे व्यक्त करने का साहस किया।

जैसी आशंका थी—वही हुआ।

सुनकर मां के नेत्र विस्मय से फटे रह गये।

"क्या ? ... अब तू नर्सिंग की ट्रेनिंग लेगी ... ?"

"हां मां ! इसमें हर्ज ही क्या है !"

"हर्ज ... ?"

मां के अधर आवेश में कुछेक क्षण कांपे, तब वह ऊंचे स्वर में पति को पुकारने लगी—"अजी सुना आपने।"

घबराये हुये से ठाकुर साहब दौड़े-दौड़े आये। छूटते ही पूछ बैठे—"क्या बात है ?"

"लो; अब आपकी लाडली नर्स बनेगी।"

प्रच्छन्न रूप से छिपे व्यंग ने अपना प्रभाव डाला। हतबुद्धि से होकर वे सहसा इतना ही बोल पाये—"नर्स ... !"

एक लघु अन्तराल के पश्चात् ठाकुर साहब परेशानी से पूछ बैठे—"यह कैसा निर्णय है बेटी ?"

लेकिन जवाब बेटी की तरफ से नहीं आया । क्रोध-मिश्रित वाणी में पत्नी ने वक्रोक्ति कसी ।

"... और पढ़ाओ अपनी बेटी को । उसका फल भोगो । अब यह नर्स बनकर उच्च राजपूत घराने का नाम उजागर करेगी ।"

सुनते ही नारायण सिंह को मानों काठ मार गया । वे हठात् कुछ बोल न सके ।

इस स्थिति का पत्नी ने पूरा-पूरा फायदा उठाया । उनकी आवाज़ और भी तीखी हो गई । वे मुंह बिगाड़ कर नकल उतारने के स्वर में कहने लगी—".. समय बदल गया है । पुराना जमाना बीत चुका है, इसलिये बच्चों को पढ़ाना माता-पिता का फर्ज है । आज अनपढ़ की कोई कद्र नहीं । लो, यह बेटी अब मनमानी करने पर उतर आई । सम्हालो इसे हुंम् ।"

इस क्रोध पूर्ण फुत्कार के साथ वहां से वे पैर पटकती हुई चली गई ।

ठाकुर साहब चिन्तातुर अवस्था में कुछ समय तक खड़े रहे, फिर उन्होंने प्रश्न-वाचक दृष्टि जमना पर डाली, जो अविचलित भाव से गर्दन झुकाये बिल्कुल मौन है । उन्हें महसूस हुआ कि लड़की किसी निर्णायक स्थिति में पहुँचकर ही उनके सामने उपस्थित हुई है, अतः कुछ भी कहने के प्रति उनकी अनिच्छा अब छिपी न रह सकी ।

चलते-चलते वे भारी मन से केवल इतना भर बोले—"जैसी तुम्हारी इच्छा ।"

इतने सहज ढंग से आज्ञा मिल जायेगी, जमना को इसकी बिल्कुल आशा नहीं थी । सर्व प्रथम वह आश्चर्य-चकित रह गई, किन्तु बाद में उसकी खुशी का ठिकाना नहीं रहा । सच तो यह है कि अब

वह अपने पैरों पर खड़ी हो जायेगी। माता-पिता पर बोझ बनकर नहीं रहेगी। यह सब अप्रत्याशित तो है, फिर भी आशा है कि इस उपेक्षित, लाछित और अव्यावहारिक जीवन से उसे सहज ही मुक्ति मिल जायेगी! मुक्ति की घड़ी में सांस लेना कैसा सुखद अनुभव है, यह तो आनन्दी मन ही जानता है। वह हो स्वतन्त्र-मुक्त!

"पानी!"

युवती ने चौंक कर पति की तरफ देखा। लगता है वे काफी देर से जगे हैं। वह इतनी देर तक विचार-मग्न थी, इसलिये इधर ध्यान ही नहीं गया। वह एकदम मानो लजा गई।

ट्रेन के शोर के साथ उसके मुह से कुछ अस्पष्ट-से शब्द फूटे—"आप बड़े वैसे हैं ...।"

प्रश्न-भरी भगिमा से अभिव्यक्त हुआ—"क्यों?"

"आपको जगे काफी देर हो चुकी है, फिर भी ...।

पत्नी ने मुह बनाते हुये वाक्य अधूरा छोड़ दिया।

पति के अधरों पर प्यारी-सी मुस्कान नाच गई। पत्नी के हाथ को सीने पर रखकर बड़े प्रेम से थपथपाते हुये वे बोले—"मैंने बीच में तुम्हें डिस्टर्ब करना उचित नहीं समझा।"

"ऊंहू.. आप बड़े शरीर हैं ...।"

मोहक अन्दाज में मुस्कराकर युवती अपने स्थान से उठी और एक गिलास पानी ले आई।

पानी पीने के बाद पति ने उसे सो जाने का अनुरोध किया, लेकिन इसको उसने सुनी-अनसुनी कर दी। वह खिड़की के पास पुनः कुहनी टिकाये बैठी रही। अनजाने ही उसकी चिबुक हथेली पर आ गई और कुछ ही देर में दृष्टि शून्य में भटक गई।

इस बार पति उठकर सामने की दूसरी बर्थ पर टांगें फैलाते हुये पसर गये। सिगरेट के कश पर कश खींचते हुये वे उबासियें लेते

लगे। धुएं से अन्दर का वातावरण घुट गया, मगर खुली खिड़की से आने वाली तेज हवा उसे उड़ा ले गई।

आश्चर्य है कि जमना की आंखों में नींद नहीं। जाने किन स्मृतियों की अजानी घाटियों में वह गुम हो चुकी है। उसका यह स्वभाव है। जब सोचने लगती है तो मूर्ति की तरह इसी अन्दाज में बैठी रहती है। अपने अतीत की बीती घटनाओं का विश्लेषण करना एक तरह से उसकी आदत-सी बन गई है।

एक बार पति की इच्छा हुई कि जमना को छेड़ा जाये! कोई रोचक प्रसंग उठाकर मनोविनोद में पूरी तरह डूब जाय! परन्तु उसकी गम्भीर मुद्रा ने विशेष उत्साहित नहीं किया। यूं भी बोझिल पलकों के नीचे मचलने वाली नींद को बरबस रोकना भी अब कठिन हो गया। मुंह से अपने आप सुस्त उबासी निकल पड़ी और थोड़ी ही देर में देखते-देखते पति की नाक बजने लगी।

सीटी बजाती हुई ट्रेन अपने घड़घड़ाते पहियों पर बड़ी तेजी से भागी आ रही है। लगता है, जैसे वह रुकना जानती ही नहीं।

युवती ने पति की ओर दृष्टि निक्षेप किया। आंखों के नीचे और चेहरे के आस-पास नींद की परियां लोरियां सुना रही हैं।

उसके होंठों पर हल्की-सी मुस्कान की छाया अनायास ही तैर गई। उसने वापिस अपने विचारों का सूत्र पकड़ना चाहा, शीघ्र ही सफल हो गई।

चैतन्य लाभ करने पर कॉटेज के मुंह से क्षीण स्वर में सबसे पहले निकला—"डाक्टर ... ! मैं ... कहां ... ?"

आत्मीयता से मुस्करा कर डॉक्टर इसके उत्तर में बोला—'आप बिल्कुल निश्चिन्त रहें। हॉस्पिटल में आप ठीक दशा में हैं ...।'

"धन्यवाद !" —पेशेन्ट ने अस्फुट स्वर में आभार प्रकट किया। डॉक्टर हल्के-से हंसे।

"इसमे धन्यवाद कैसा ! यह तो हमारा फ़र्ज़ है । फिर भी... फिर भी ... ।"

कहते-कहते डॉक्टर कुछ क्षणों के लिये रुके । पीछे खड़ी नर्स की तरफ इशारा करके वे फिर कहने लगे—"अगर धन्यवाद देना है तो इसे आप कभी न भूलें । यही खोजकर और अपनी पीठ पर लादकर आपको युद्ध क्षेत्र से लेकर आई थी । इसके बाद लगातार तीन दिन और तीन रातें जागकर इसने आपकी देख-भाल की थी । इसका शुभ परिणाम आप स्वयं अपनी आंखों से देख रहे हैं, कुछ कहने की आवश्यकता नहीं ।"

डॉक्टर चले गये, लेकिन कैप्टिन को सोचने के लिये विवश कर गये । कृतज्ञता से भीगी-भीगी दृष्टि दूर खड़ी नर्स की आंखों से टकराई और पल भर में वह अन्तस की गहराइयों में उतर गई ।

"नर्स !"—भावपूर्ण स्वर मे होंठ थरथराये ।

जैसे एक करिश्मा हो गया । कहां गया वह अजनबीपन ?—इस एक दृष्टि से मानों अपरिचय का भाव अपने आप दूर हो गया । क्या आंखों की इस मूक स्वर लिपि के पीछे गुप्त रूप से कोई अनजान रिश्ते छिपे रहते हैं, जो समय पाकर अन्तर-स्रोत को तर कर जाते हैं ?

उसका बदन रोमांचित-सा हो गया ।

पहली ही दृष्टि में प्यार वाली उक्ति को वह हमेशा मूर्खता की बात समझती थी । अक्सर इस किस्म की चर्चा करने वाली अपनी सहेलियों की वह खूब मजाक उड़ाती थी । इसके विपरीत आज क्या हो गया ?—प्रश्न अपने-आप में महत्वपूर्ण है !

उनका एक विशेष भाव-भीनी और अनुराग से परिपूर्ण अन्दाज़ में पलकें उठाना, इनमें हृदयग्राही कम्पन ले आना, अब फिर मीठी-मीठी आवाज़ में बोलना ... ! यह सब क्या है ?—अथवा है कि रोम-रोम

एक अज्ञात पुलक से आह्लादित हैं ।

हुआ वही, जिसकी उम्मीद की जा सकती है । जिसने अस्वाभाविक कठोरता से अपने हृदय को संयम की कंदराओं में बन्द कर रखा है, जिसने अनावश्यक वैरागीपन की निर्मम चट्टान के नीचे जीवन के आनन्द,उमंगें और आकाक्षाओं की सरस भावनाओं को दबा रखा है,एक बार पत्थर हटाने पर निर्मल पानी का ऐसा झरना फूटता है कि मन इस स्पर्श से बेसुध हो जाता है । कैसा विद्युत सचार-सा होने लगा है उसके तमाम शरीर मे ।

जैसा कि इस उम्र मे लडकियो का स्वभाव होता है, उसी के अनुसार वह काफी दिनो तक संकोच और लज्जा से कतराती रही । किन्तु, एक विरोधी – सर्वथा नवीन – विचार-धारा भी उसके हृदय में प्रवाहित है । उसके अधीन प्रीत की डोरी में बध जाने के लिये उसका यह मन आतुर है । जी चाहता है कि वह अपने प्रेमी की बाहो मे झूलती रहे । सामने आने से डरती है, कहीं वे पुकार न लें । लेकिन साथ ही उनकी कर्ण-प्रिय ध्वनि सुनने के लिये कान तरसते हैं । वह पास आने से घबराती है, फिर भी उनका सान्निध्य और मधुर स्पर्श पाने के लिये भीतर ही भीतर प्राण छटपटाते हैं ।

अन्त में अन्दर की छटपटाहट को जैसे कोई समाधान मिल गया ।

जिसकी सम्भावना थी – वही होकर रहा ।

उनकी एक आवाज पर पैरों में मानो बेड़िया पड गई । यंत्र-चालित सी वह आगे बढ़ गई । गर्दन झुकी-झुकी सी रही । सचमुच इस वक्त परस्पर आंखें मिलाने का साहस भी उसमे नहीं रहा ।

निकटता के लिये अधीर मन को संयत करके कैप्टिन ने उसके सम्मुख एक प्रस्ताव रखा ।

"जमना ! मैं तुमसे शादी करना चाहता हूं ।"

लड़की एकाएक अवाक्-चकित रह गई। प्रस्ताव भी ऐसे आकस्मिक और अप्रत्याशित रूप से आया है, जिस पर एकदम विश्वास नहीं किया जा सकता।

अब अविश्वास और सन्देह करने का भी कोई युक्ति-युक्त कारण दृष्टिगत नहीं होता। लेकिन इस पर भी जीवन का इतना महत्व-पूर्ण निर्णय एक क्षण में कैसे लिया जाय? उसके प्रत्येक पहलू पर दृष्टि डालकर विचार करना अनिवार्य है! संयत चित्त से सारी ऊंच नीच देख लेना जरूरी है।

उसे असमंजस और अनिश्चय के झूले में झूलते देखकर कैप्टिन घबराये। शायद उन्होंने इस मौन का विपरीत अर्थ लिया। इस कारण व्यग्र कण्ठ से पुनः कहने लगे—"जमना! मैं तुम से प्यार करता हूं।"

जैसे अन्धकार-पूर्ण मन के प्रांगण में बड़ा ही धूप-धुला प्रशस्त फैलाव उतर आया। यह हर्ष और उल्लास का सर्वोत्तम क्षण है, जिसे कभी भी विस्मरण नहीं कर सकते। उस जैसी अपमानित, लांछित और परित्यक्ता का ऐसा सौभाग्य कहां! खुशी के मारे उसकी आंखों में आंसू छलक आये।

थोड़ी ही देर में अपने आप पर काबू पाकर उसने धीरे-धीरे अतीत का वह काला पृष्ठ पढ़कर सुना दिया, जिसके पीछे उसे क्या क्या यातनायें भोगनी पड़ी।

लेकिन इस दुर्भाग्य-पूर्ण प्रसंग को कैप्टिन ने अपनी एक सरल एवं निर्लिप्त हंसी से ही खत्म कर दिया। तथा इस कथन से उनके मन में कोई भ्रम उत्पन्न नहीं हुआ।

जमना तो निहाल हो गई। अनायास ही, प्यासे चकोर को अमृत-बूंद मिल गई।

अब पत्नी की प्रेमातुर दृष्टि देखकर सोये पति के चारों ओर

मुग्ध भाव से कुण्डली मार कर बैठ गई ।

ट्रेन खूब तेज रफ्तार से भाग रही है, शायद अगला स्टेशन काफी दूर है ।

रणभूमि से लौटकर आने वाले बेटे का हार्दिक स्वागत करने की बेचैनी अति स्वाभाविक है । माता-पिता को एक-एक क्षण की प्रतीक्षा भारी लग रही है । उनके दर्शनाभिलाषी नेत्र बार-बार रेल की पटरियों पर बिछ जाते हैं ।

अन्त में वह चिर प्रतीक्षित घड़ी भी निकट आ गई । अपने लाडले को प्रसन्न-वदन उतरते देख उनके हृदय-कुसुम खिल उठे ।

विजयोल्लास से मुस्कराते हुये बेटे ने चरणों में झुक कर प्रणाम किया । पिता का मस्तक गर्व से ऊंचा हो गया । अश्रुप्लावित चक्षुओं से शुभ आसीसों की झड़ी लगाते हुये उन्होंने उसे छाती से लगा लिया ।

"पिताजी ! यह आपकी बहू जमना है ।"

पीछे खड़ी युवती का परिचय देते हुये बेटे ने सहर्ष कहा ।

"ज ... म . ना ... !"

ठाकुर विक्रमसिंह को अचानक एक धक्का-सा लगा । कुछ सोचते हुये वे दो कदम पीछे हट गये ।

इधर जमना के भी होश गुम ! कैसा आकस्मिक संयोग है ! उसे स्वप्न में भी आशा नहीं थी कि उसके ससुर वही निर्दयी ठाकुर होंगे, जिन्होंने घृणा एवं विरक्ति भाव से एक दिन उसे ठुकरा दिया था । अब ... ?

प्रश्न की धार कटार के समान तेज है, इसलिये अतिशय घबराहट में पत्नी पर अवर्णनीय सख्ती सी छाने लगी ।

बेटा शीघ्र ही समझ गया । उसने स्थिति को स्पष्ट करते हुये कहा—"पिता जी ! वह अशुभ चूनरी-मंगल कभी का खतम हो चुका है । इसने ही संकट के समय मेरे प्राणों की रक्षा की । पण्डितों की वह घोषणा मिथ्या और पाखण्ड-पूर्ण सिद्ध हुई ।"

"सच !"

जैसे ठाकुर साहब की आंखों पर पड़ा वह भ्रम का काला पर्दा एकाएक हट गया । संकोच के कारण वे अपनी भूल का पश्चाताप भी नहीं कर सके । बीच ही में कण्ठावरोध हो गया । लेकिन आशीर्वाद देने के लिये जमना के सिर पर उनका हाथ उठ ही गया ।

"सुखी रहो ... ।"

सिसकती कलियां

गांधी मार्ग के फुटपाथ की अपनी अनेक विशेषतायें हैं। पास ही पब्लिक पार्क है, इससे उसका मूल्य और महत्व अधिक बढ़ जाता है।

सर्व-प्रथम पोस्टरों की अजरज-भरी आकृतियां सब का ध्यान आकर्षित करती हैं। वे इतनी रोचक और मन-भावन हैं कि क्षण भर ठहरकर उनका अवलोकन करने को जी चाहता है। विभिन्न प्रकार की भाव-भंगिमा बनाये जैसे वे अपने पास बुलाती हैं। है न कलाकार का कमाल! अलग-अलग रेखाओं में ऐसे रंग भरे हैं कि दृष्टि अपने आप स्थिर हो जाती है।

ये हैं सिने-जगत के सुप्रसिद्ध कलाकार, जो विचित्र मुख-मुद्रा से

अपनी अभिनय कला का परिचय दे रहे हैं । उषा के पंखे अपनी ठण्डी हवा के लिये आमन्त्रित करते हैं । सिलाई की मशीन तो मानों अभी आपको सुन्दर वस्त्र सी कर पहना देगी । साइकिल चलाती हुई षोडषी बाला की मुस्कराहट तो देखते ही बनती है। कहीं मोटर, कहीं अखबार, कहीं साबुन, कहीं कपड़े कहीं रेडियो आदि के विज्ञापनों की मूक वाणी भी सजीव तथा वाचाल हो उठती है ।

वस्तुतः आधुनिक युग बहु-चर्चित विज्ञापनों का ही युग है। यह उसकी उल्लेखनीय सफलता है । व्यक्ति के दैनिक जीवन में य धीरे-धीरे महत्व-पूर्ण स्थान ग्रहण करते जा रहे हैं । आंखों के आगे और कानों के पास समय-असमय केवल विज्ञापनों का ही शोर सुनाई पड़ता है । स्मृति में सदैव इनकी धुमली-धुमली साया-सी मडराया करती है । अवचेतन मन भी इनसे अस्पृश्य नहीं रहा । व्यक्ति चाहकर भी इनसे सहज ही में मुक्ति नहीं पा सकता ।

"जिया बेकरार है छाई बहार है .. ।
आजा मोरे बालमा तेरा इन्तजार है ... ।"

ढोलक, चिमटा और हारमोनियम के साथ मिलकर यह स्वर-लहरी दूर-दूर तक चली जाती है । सड़क पर चलने वाला जन-समूह कौतूहल-वश उसके चारों ओर सिमटता चला आ रहा है ।

सात आदमियों का छोटा-सा दल ! सिर पर नेवी-कट टोपी ! सफेद और काली पट्टी का लिबास ! बड़े बेहूदे ढंग से उछल-कूद करते हुये वे अपने कुरूप हाव-भावों का प्रदर्शन कर रहे हैं ।

उनमें दो छोटे लड़के भी शामिल हैं । उनकी आयु लगभग बारह और चौदह साल के करीब है । वे दोनों बहुत ही भौंडे तरीके से अपने हाथों को ऊंचा करके नाच रहे हैं । इनके साथ अपने बेसुरे गले से उपरोक्त गीत को गाने का निरर्थक प्रयास भी करते जा रहे हैं । एक अजीब फटी-फटी सी बेसुरी आवाज़ उनके कण्ठ से निकल पड़ती है, जो

अप्रिय ही नहीं बेहद कर्ण-कटु है ! मगर खिचकर आ गई भीड में से कइयों को इसमें भी खूब रस आ रहा है । है न आश्चर्य !

उन लड़कों में से एक ने लखनवी जनाना लिबास पहन रखा है। सिर पर चमकती हुई गोटे की तिरछी टोपी है । गले में सलमे-सितारो वाली रेशमी चुन्नी पड़ी है । पावडर, क्रीम, काजल और लिपिस्टिक से उसने चेहरे का मेकअप कर रखा है। दूसरा केवल चूडीदार पायजामे और कुर्ते में हैं। अलबत्ता सिर पर वैसी ही टोपी है।

"जिया वेकरार है ...... ।"

पहला लडका अपने कण्ठ-स्वर को अत्यधिक लोचदार बनाकर गाता है तो दूसरा भी उसके स्वर मे स्वर मिलाकर चीख पडता है—"हाय मेरी जान, सदके जावा ... !"

भीड तुमुल हर्ष-ध्वनि करती हुई झूम उठती है। कोई चिल्लाता है । कुछेक आंख मारते हुये अश्लील सकेत करते हैं । किसी ने चोली में उभरे हुये नकली उरोजो की तरफ दृष्टि उठाकर सीटी बजाई है । कुछ ऐसे भी हैं, जो खीसें निपोर कर अशिष्ट शब्दो के द्वारा उक्तियां कस रहे हैं । पूरा का पूरा वातावरण इतना अधिक उत्तेजना-पूर्ण हो गया है कि शील-संकोच का कहीं भी चिन्ह नहीं । ट्रैफिक बन्द हो गया है, उनकी बला से ! मोटरें हार्न बजाती हैं, रिक्शे-वाले चिल्लाते हैं, तांगे वाले चीखते हैं, लेकिन यहां किसे परवाह है ! और तो और ट्रैफिक कन्ट्रोल करने वाला पुलिस का सिपाही भी उन्हें देख-देख कर मजे से खीसें निपोर रहा है । कैसा वशीकरण है इनके पास !

अचानक मशीन व साज का यह अलबेला कार्यक्रम बन्द हुआ । लगा जैसे उमग से भरा समारोह का आश्चर्य-जनक ढग से पटाक्षेप हो गया । उपस्थित जन-समुदाय घड़ी भर के लिये हक्का-बक्का रह गया और एक-दूसरे का मुंह जोहने लगा ।

इतने मे दल का एक व्यक्ति सामने आया और अपने थैले में से

बीड़ी का एक बण्डल निकाल कर कहने लगा—"बीड़ी नम्बर वन ! बढ़िया पत्ते और तम्बाकू से बनी। इसकी शोहरत सारे हिंदुस्तान में है। फिल्म स्टार तक शौक से पीते हैं। ... बीड़ी नम्बर वन ! अभी रियायती दामों में मिलेगी। तीस पैसे के बण्डल के पीछे एक माचिस मुफ्त ! .. बीड़ी नम्बर वन ! बुड्ढा पीये तो जवान हो जाय, आशिक पीये तो उसकी *महबूबा मेहरबान हो जाय। ... बीड़ी नम्बर वन ...* बीड़ी नम्बर वन ... ।"

इस प्रशस्ति-गान के साथ वह एक वृत्त में मथर गति से घूमकर चक्कर लगाता रहा, फिर अपनी आवाज़ से लोगों को प्रभावित करने लगा।

वही फुटपाथ के पास वाली सड़क । वही दो लड़के। लेकिन आज भिन्न रूप और भिन्न वेश में, हाथ के ठेलों पर सिनेमा के बड़े-बड़े पोस्टर ढो रहे हैं।

"भाई जान, आपने यह फिल्म देखी ?"

'हां।"

"कैसी लगी ?"

"एकदम रद्दी।"

इतना कहते हुये उसने अपनी नेकर की जेब में हाथ डाला। दस पैसे वाले बीड़ी के बण्डल के साथ नया-सा पर्स निकलकर सड़क पर गिर पड़ा।

छोटे की आंखें विस्मय से फैल गईं।

"अरे, बटुआ ?"

"अबे जानू, तू क्या समझे है।" बड़ा शेखी बघारने

"ये साले बीड़ी वाले दिन भर हमें नचाते हैं,पर यह बन्दा लालू उस्ताद चुपके से उनकी ही पाकेट मार लेता है ... हि: . हि. ... हि. ....।"

एक खोखली-सी प्रभाव—हीन हंसी।

जानू जैसे बुझ गया।

"भाई जान, दिन भर नाचते-नाचते मेरे तो पांव दर्द करने लगते हैं।"

बड़े ने गहरी उसास छोड़ी। उदास कण्ठ से बोला—"मेरा भी यही हाल है।"

"पांव के तलवे जगह-जगह से फट गये हैं।"

जानू की आंखों में अवसाद की मार्मिकता सघन हो गई।

लालू चुप। बीड़ी के लम्बे-लम्बे कश खींचता हुआ वह ठेला चलाता रहा।

कभी पास से तांगे गुजर जाते हैं, कभी मोटरें, साइकिलें और कभी रिक्शें! पैदल चलने वालों की संख्या भी कम नहीं है। भीड़ का तांता टूटता ही नहीं। वैसे यह शहर की एक प्रमुख और व्यस्त सड़क है। व्यापारिक दृष्टि से तो इसका बहुत महत्व है। बड़े-बड़े बैंक और दुकानें इसके दोनों तरफ मौजूद हैं।

लालू ने सड़क पर अधजली बीड़ी फेंकी और वितृष्णा से मुंह बिगाड़ कर उसे पैर के जूते से कुचल दिया। न जाने कैसा अस्पष्ट-सा भाव लहर की तरह उसके मन में तरंगित हो गया।

अब उसने उड़ती हुई भावहीन दृष्टि आस-पास की दुकानों पर डाली। खिचकर आती हुई भीड़ में भी उसने कोई दिलचस्पी नहीं ली। केवल अनमने भाव से देखता रहा।

तभी सामने फुटपाथ पर आते हुये दीनू और उसके साथी मिल गये। सबके हाथों में बूट-पालिश के बक्से हैं।

उनमें से एक छेड़ने की गरज से चिल्लाया—"देख पनिया, वह

मनारवती और उसका यार जा रहा है ।"

सालू भर् से जल उठा ।

"भरे भो दीनिया के बच्चे, इस तरह ऊल-जलूल बकना छोड़दे, बरना भच्छा नहीं होगा ।"

"जा-जा इन धमकियों से मैं डरने वाला नहीं ।"—दीनू ने लापरवाही से कहा । तब उसने तीखा कटाक्ष किया—"साला जनानियों की तरह सड़क पर नाचता फिरता है और हम पर जमाता है रोब ! ... हुँम !"

उसने विरक्ति और घृणा के अतिरेक में नीचे सड़क पर थूक दिया ।

"मादर ... चुप रह ।"

सालू ने आग्नेय नेत्रों से देखकर बाहें चढ़ाई ।

दूसरी ओर से भी चुनौती का स्वर सुनाई पड़ा— "आजा भैंन... । किसे धौंस बताता है ।"

उसके साथियों ने भी बढ़ावा दिया ।

"दीनू ! आज स्साले की ऐसी मरम्मत करदे कि यह चूहे की औलाद जिंदगी भर याद रखे ।"

"आने तो दे मां .. को । खूब ठुकाई करूंगा ।"

"भरे तेरी भैंन की ..... ।"

सालू ने दांत किटकिटाये और देखते ही देखते दोनों गुत्थमगुत्था हो गये ।

"मार स्साले को ... और मार ... । तोड़ दे दांत मादर ... के ... । ... मार ।"

शेष साथी घेरा बनाकर खड़े-खड़े तमाशा देखते रहे ।

उस दिन, संयोग से, इब्राहीम बैंड-मास्टर का घर खोजते-खोजते मैं उस्ताद महमद के घर पहुँच गया। भाई की शादी है, जिसमें बैंड की आवश्यकता है। समय पर पेशगी देनी जरूरी है।

जिस घर के दरवाजे पर मैं खड़ा था, वह एक तरह से टूटा-फूटा, गंदा और अव्यवस्थित ही नजर आया। उसके बदरंग जीवन की आन्तरिक वास्तविकताओं को पहचानने में शायद इतनी मुश्किल नहीं होगी, ऐसा ही कुछ लगा। बाहर और भीतर – किसी हद तक उसके आसपास टटोलने का मेरी दृष्टि का प्रयास कहीं विफल न हो जाय, इस सम्भावना से सतर्क होकर मैंने आवाज लगाई। लेकिन प्रत्युत्तर नहीं मिला।

किंचित् झिझक कर दरवाजे पर लगा टाट का पर्दा मैंने हटाया और बिन बुलाये मेहमान की तरह दबे पाव घर में घुस गया। आंगन में गया तो एक बुरी से गंध से मेरा सिर भिन्ना गया। सांस लेना भी कठिन है, मजबूरी में यह महसूस हुआ।

किसी कृत्रिम अन्धेरे के प्रभाव से भचकचा गई दृष्टि को बड़े यत्न से सामान्य करके मैंने चारों तरफ देखा। वहां बिखराव और अव्यवस्था है, जो साधारणतया आलसी और फिसड्डी किस्म के लोगों के घरों में घटिया स्तर की होती है। कोई भी चीज अपनी जगह पर नहीं। सारी की सारी बेतरतीब ढंग से फैली पड़ी हैं।

एक टूटी माची पर मैली सी दरी बिछी है। नीचे फर्श पर झूठे बर्तन बिखरे हुये हैं। जर्मन-सिल्वर की थाली और कटोरी पर जाने कब से मक्खियाँ भण्डरा रही हैं। चीनी मिट्टी उतरी चद्दर की प्लेट एक कोने में पड़ी है, शायद कोई गली का कुत्ता अभी-अभी उसे चाट गया है। इसके अलावा चाय पीने का कप और पुरानी भत्तन का टूटीदार लोटा दोनों औंधे रखे हुये हैं। वे सब मिलकर अपनी दीन हीन दशा की करुण कहानी खुद सुना रहे हैं। गिलास लुढ़क गया है

कहा—"मैं भी पूरी तरह थक चुका हूँ।"

"चुप !"

उसी समय उस्ताद ने बेरहम बनकर उन दोनों
डांटा—"कल शादी के बैंड के आगे कौन तुम्हारा बाप नाचेग

"अब्बा ...।"

छोटे लड़के का यह करुण स्वर अचानक हल्की-सी चीं
बदलकर उस दयाहीन वातावरण में कुछ देर तक अनुगूंज पैदा क
रहा।

ये वेही दोनों मासूम लड़के हैं। मैं सहसा विस्मित—च
रह गया। लेकिन आज की स्थिति तो बिल्कुल भिन्न है। एक
पिशाच के चुंगल में मानों कोई असहाय अबला फंस गई है
घटना केवल अविस्मरणीय नहीं, बल्कि हृदय-स्पर्शी भी है।

इस बार छोटा लड़का मुंह फाड़कर रोने के लिये अधीर हो

"अ ब् .. ब् ... बा !"

"चुप शैतान !"—कर्कश कण्ठ से वह पाषाण-खण्ड ए
चिल्लाया—"अब खड़े हो जाओ, वरना चमड़ी उधेड़ कर रख दूंग

मैं सिहर उठा।

उस क्रूर मानव के हाथ में थरथराती बेंत ! आंखों से निः
क्रोध की ज्वाला। भय से पीले पड़कर गिड़गिड़ाते हुये वे लाचार
असहाय लड़के !

अब मैं अधिक देर चुप न रह सका। हस्तक्षेप की अनि
चेष्टा करते हुये मैंने आहिस्ता से कहा—"खां-साहब ! आप इन
पर जरा रहम कीजिये। डर के मारे इनका बुरा हाल है।"

जैसी आशा थी—ठीक वैसा ही हुआ। मेरे कथन से
आंखों में खून उतर आया। कदाचित् वे मेरी इस धृष्टता क
समय सहन करने की स्थिति में बिल्कुल नहीं थे।

मैं अवाक्-स्तब्ध !

"बाबू ! मैं क्या करूं ? मैं खुद मजबूर हूँ । मेरे जैसे
बाधार लोगो की यही हालत है ।"

उसके गालों पर सहसा अश्रु-धारा बह आई जिसे वह रोक
लिये दूसरी तरफ़ देखने लगा । तनिक रुक कर उसने कहना आ
किया—"... आप समझते हैं कि यह सब कुछ मैं जान-बूझ कर
हूँ । नहीं साहब नहीं, मुझे अपने बच्चे उतने ही अज़ीज़ हैं,
दूसरे मां-बाप को लगते हैं । लेकिन लेकिन ... ले कि . न.

कहते-कहते वह सुदूर शून्य मे देखने लगा ।

क्षण भर ठहर कर उसने भावावेश मे फिर मुह खोल
"... आपको कैसे यकीन दिलाऊं कि एक जमाना मेरा भी था ।
तबले की आवाज सुनकर शहर की नाचने वालियों के पैर अपने
थिरक उठते थे । जिस महफिल मे तबले लेकर मैं पहुँच जात
फिर सुबह तक उसके उठन का नाम नही । और आज वक्त
बदिश मे यह सब कुछ खतम हो गया है ... ।"

उसके इस उदास और निराशापूर्ण स्वर ने समस्या के
पक्ष को स्पष्ट कर दिया ।

मैं शीघ्र ही समझ गया । इस सामाजिक क्रान्ति के यु
जहा पुराने दाकियानूसी सस्कार और रूढिवादी परम्परायें बडी तेज
बदल रही है, वहा ये सामन्तवादी आडम्बर कैसे टिक सकते हैं! उ
स्थान तो नई मान्यतायें एव नये मूल्य ले रहे हैं । इनका समाप्त
प्रायः सुनिश्चित है ।

"... हमारे लिये सबसे बडी मुसीबत तो यह है कि हम दू
कोई इल्म नही जानते काम भी नही जानते । अव्वल तो कि
तरह का काम हमे मिलता हो नहीं । अगर किस्मत से मिल भी
तो वह हमारे बस का नहीं । रोज़ी चलाने व पेट पालने का ह
पास और कोई ज़रिया नही । ... क्या करें ?"

उसके चेहरे पर विषाद की छाया घनी

सच तो यह है कि उसने जिस रहस्य
वह चौंका देने वाला है। वास्तव में मैं ए
थोड़ा गहराई में उतर कर सोचने लगा। इन
की समस्या बहुत ही जटिल है। इन गन्दे
के भीतर न मालूम कितने जीवन बर्बाद हो र
बड़ी बेदर्दी से लुट चुकी हैं। ये निर्बल, निरः
इन्सान आज बेकारी, भुखमरी और गरीबी की द
रहे हैं। वैश्याओं के कोठे बन्द हो चुके हैं। आज
अस्तित्व प्रायः समाप्त हो गया है। इस सचाई को
लेकिन इनके पुनर्वास का सम्पूर्ण दायित्व तो आज
पर है। वह इनकी तरफ़ से आखें कैसे मूंद बैठा है।

"बाबूजी !" उसने अश्रुपूरित आंखो से
आकांक्षा प्रकट की—"मैं भी चाहता हूं कि मेरे बच्चे भी
लेकर कोई बड़ा हुनर सीखें। कोई इल्म सीखकर बेहतर
पर ... पर ... प ... र ... ।"

इतना कहते हुये वह अन्दर की कोठरी में फुर्ति से
वहां पहुँचकर वह फूट-फूट कर रोने लगा।

उसके चेहरे पर विषाद की छाया घनीभूत हो गई।

सच तो यह है कि उसने जिस रहस्य का उद्घाटन किया
वह चौंका देने वाला है। वास्तव में मैं एक विचारशील की त
थोड़ा गहराई में उतर कर सोचने लगा। इन जैसे विस्थापित लो
की समस्या बहुत ही जटिल है। इन गन्दे घरों की चहारदीवा
के भीतर न मालूम कितने जीवन बर्बाद हो रहे हैं। इनकी खुशि
बड़ी बेदर्दी से लुट चुकी है। ये निर्धन, निराश्रित और निःसहाय
इन्सान आज बेकारी, भुखमरी और गरीबी की दारुण यन्त्रणा सहन कर
रहे हैं। धंधाओं के कोठे बन्द हो चुके हैं। आज के समाज में उनका
अस्तित्व प्राय: समाप्त हो गया है। इस सचाई को हम स्वीकार करते हैं,
लेकिन इनके पुनर्वास का सम्पूर्ण दायित्व तो आज के जागरूक समाज
पर है। वह इनकी तरफ से आँखें कैसे मूंद बैठा है ...

"बाबूजी!" उसने अश्रुपूरित आँखों से अपनी एक मात्र अभिलाषा प्रकट की—"मैं भी चाहता हूँ कि मेरे बच्चे भी अच्छी तालीम लेकर कोई बड़ा हुनर सीखें। कोई इल्म सीखकर बेहतर इन्सान बनें, पर ... पर ... प ... र ...!"

इतना कहते हुये वह अन्दर की कोठरी में फुर्ति से चला गया। वहाँ पहुँचकर वह फूट-फूट कर रोने लगा।

मैं अपने मन में उसके प्रति गहरी सम्वेदना और सहानुभूति अनुभव कर रहा हूँ।

दोनों लड़के बहुत ही बेचैनी से कभी मेरी ओर देखते हैं, कभी उस कोठरी की तरफ, जिसमें उनका बाप रोता हुआ चला गया है।